॥ श्रीः ॥

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला

४०३

# महाकालसंहिता

## (गुह्यकालीखण्डः)

[ प्रथमो भागः * १-५ पटलात्मकः ]

ज्ञानवतीहिन्दीभाष्येण विभूषिता

व्याख्याकारः सम्पादकश्च

**आचार्य राधेश्याम चतुर्वेदी**

व्याकरणाचार्यः एम.ए.(संस्कृत), पीएच.डी., लब्धस्वर्णपदकः

शास्त्रचूडामणिविद्वान्

इमेरिटस प्रोफेसर एवं अध्यक्षः, संस्कृत विभागः

देवसंस्कृतिविश्वविद्यालयः, गायत्रीकुञ्जशान्तिकुञ्जः, हरिद्वार

(पूर्वाचार्यः) संस्कृतविभागः, कलासंकायः

काशीहिन्दूविश्वविद्यालयः, वाराणसी

**चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन**

वाराणसी

# गुह्यकालीखण्ड—१

## संक्षिप्त परिचय

**प्रथम पटल**—इस पटल में गुह्यकाली के मन्त्रों के प्रकार बतलाये गये हैं। मन्त्रों के भेद से ध्यान, यन्त्र और वाहनों में भी भिन्नता रहती है। जिस उपासक ने जिस मन्त्र का जपपूर्वक अभ्यास किया, वह मन्त्र उसी उपासक के नाम से प्रसिद्ध हो गया। गुह्यकाली की उपासना ब्रह्मा, वशिष्ठ, राम, हिरण्यकशिपु, कुबेर, यम, भरत, रावण, बलि और इन्द्र आदि ने की। मुखों के आधार पर गुह्यकाली के ग्यारह रूप हैं—(१) शतवक्त्रा, (२) अशीतिवक्त्रा, (३) षष्ठिवक्त्रा, (४) षट्त्रिंशद्वक्त्रा, (५) त्रिंशद्वक्त्रा, (६) विंशतिवक्त्रा, (७) दशवक्त्रा, (८) पञ्चवक्त्रा, (९) त्रिवक्त्रा, (१०) द्विवक्त्रा और (११) एकवक्त्रा। इनमें भरतोपास्या दशवक्त्रा काली प्रधान हैं। उसकी चौवन भुजायें हैं। उसका मन्त्र सोलह अक्षरों वाला है। इसके अनन्तर इस पटल में राम तथा च्यवन द्वारा उपासिता काली का मन्त्र तथा उसका स्वरूप वर्णित है। भरत एवं राम के द्वारा उपासिता काली का ध्यान एक ही है। इस काली के आसनों की चर्चा करने के बाद दशवक्त्रा के ध्यान का वर्णन है। यह काली दश मुखों तथा सत्ताईस नेत्रों वाली है। ये दशोमुख—गैंडा, शेर, सियार, बन्दर, भालू, मनुष्य, गरुड़, घडियाल, हाथी और घोड़ा के हैं। ये हाथों में अनेक अस्त्र-शस्त्र धारण की हुई तथा अनेक अलङ्करणों से युक्त हैं। यह देवी तीन करोड़ शक्तियों, नव करोड़ चामुण्डाओं, अठारह करोड़ महायोगिनियों, साठ करोड़ डाकिनियों, अस्सी करोड़ भैरवियों से आवृत और करोड़ों कालाग्नियों तथा करोड़ों सूर्यों के सदृश प्रभावाली है।

शतवक्त्रा गुह्यकाली का उपासक हिरण्यकशिपु हैं। इसका मन्त्र सोलह अक्षरों वाला है। यह दश हजार भुजाओं तीन सौ नेत्रों तथा सिंह, हाथी, घोड़ा, शरभ, वानर, सियार, गरुड़, भालू, ऊँट तथा गदहा के मुखों वाली हैं। यह सिंह का चर्म और रक्त चूते एक-सौ आठ नरमुण्डों की माला पहनी हुई हैं। सारे अङ्गों में नर अस्थि के आभूषण पहनी हुई हैं। सम्पूर्ण शरीर रक्त से उपलिप्त है। करोड़ों भयानक भैरवी एवं योगिनी गणों से युक्त है। अस्सी मुखों वाली काली के विषय में पार्वती द्वारा पूछे जाने पर परमेश्वर ने कहा कि इसका स्वरूप एवं मन्त्र अत्यन्त गोपनीय होने पर भी मैं तुम्हें बतलाऊँगा। किन्तु सभी कालियों में दशमुखी काली

मुख्य हैं। शेष गौण हैं। दशवक्त्रा काली प्रकृति अर्थात् मूलकारण है और शेष एकवक्त्रा आदि उसकी विकृतियाँ हैं। यह गुह्यकाली ब्रह्मा, विष्णु आदि सबकी नियामिका, विश्व की स्रष्ट्री, पालयित्री और संहर्त्री हैं।

गुह्यकाली के ब्रह्मा, विष्णु और महेश ये तीन प्रथम उपासक हैं। ये क्रमशः उसके रजस्, सत्त्व एवं तमस् अंश से उत्पन्न हैं। ये तीनों निरन्तर उसके निराकार रूप का ध्यान करते रहते हैं। इस उपासना में मन, बुद्धि, एकत्व भावना, नेत्रतेज एवं अपना शरीर ही क्रमशः गन्ध, पुष्प, धूप, दीप और नैवेद्य होते हैं। इसके पाँच महावाक्य हैं—१. ॐ तत्सत्, २. सोऽहमस्मि, ३. अहं ब्रह्मास्मि, ४. अहमेवेदम् और ५. अहमेवेदं सर्वम्। इन महावाक्यों का जप कहीं भी किसी भी स्थिति में किया जा सकता है। शूद्र आदि सभी का इसके जप में अधिकार है।

जहाँ तक गुह्यकाली के द्वितीय उपासकों का प्रश्न है तो इस श्रेणी में इन्द्र-चन्द्रमा आदि देवगण, स्वायम्भुव आदि मनु लोग, मरीचि आदि ऋषिगण, नारद आदि देवर्षिगण, ब्रह्मर्षि, यजर्षि, असुरार्षि, गन्धर्व, राक्षस आदि सभी लोग हैं। इसका ध्यान विराट् ध्यान कहलाता है। ब्रह्माण्ड के बाहर ऊर्ध्ववर्ती महत्तत्व से लेकर महापाताल तक उसकी जटा है। ब्रह्माण्ड का ऊर्ध्वकपाल उसका शिर है। छत्तीस लाख योजन विस्तृत देवीलोक उसका ललाट है। सुमेरु पर्वत सीमन्त है। शिवलोक, वैकुण्ठलोक दोनों कान, गङ्गा उसकी नासिका है। इसी प्रकार अन्य तत्त्वों में अन्य अङ्गों की भावना करनी चाहिये। ब्रह्मा से लेकर स्तम्ब तक उसका शरीर माना गया है। इसके स्वरूप का ध्यान ही इसकी पूजा है।

इसके पश्चात् इस पटल में गुह्योपनिषत् का वर्णन किया गया है। इस क्रम से कठ, श्वेताश्वतर आदि में वर्णित ब्रह्म के स्वरूप से मिलते-जुलते श्लोकों के द्वारा गुह्यकाली का वर्णन किया गया है। कुछ मौलिक श्लोक भी हैं। द्वितीय श्रेणी के उपासकों के तीन महावाक्य हैं—१. सोऽहमस्मि, २. साऽहमस्मि, ३. तदहमस्मि। इनके ऋषि आदि का वर्णन करने के बाद द्वितीय उपासकों के द्वारा विहित उपासना के माहात्म्य की चर्चा की गयी है कि यह गुह्योपनिषत् चारों वेदों का सार है। जिस उपासक के मन में गुह्यकाली के उक्त स्वरूप का निश्चय हो जाता है उसका कुल पवित्र हो जाता है। माता कृतकृत्य हो जाती है। इस विधान की महिमा का वर्णन करना असम्भव है। जो इस विधान का लेशमात्र भी अनुष्ठान करता है, वह सात पूर्वजों और सात अवरजों को मुक्त कर देता है। स्वयं वह सायुज्य मुक्ति प्राप्त करता है।

**द्वितीय पटल**—जगदम्बा गुह्यकाली के द्वारा देवताओं की सृष्टि करने एवं उनको उनके अधिकारों से युक्त करने के बाद मैथुनी प्राकृत सृष्टि की गयी। इस क्रम में पहले मनु फिर वसु आदि पैदा हुए। वे उत्कृष्ट वर प्राप्त करने के लिये उग्र

तपस्या करने लगे, परिणामस्वरूप देवी प्रसन्न हुई और वर देने को तत्पर हो गयीं। सबसे पहले हम वर प्राप्त करें—देवताओं के इस कलह को दूर करने के लिये देवी ने, देवताओं की जितनी संख्या थी उतने मुख धारण किये। फलतः देवी का यह रूप बड़ा भयङ्कर हुआ। इसके कारण देवताओं ने एक साथ देवी से वर प्राप्त किया। देवी के मुखभेद के अनुसार उसकी भुजाओं की संख्या भी भिन्न-भिन्न थी। देवी के सम और विषम रूपों के लिये उतने ही अस्त्र भी थे।

इस प्रकार नाना विध रूपों, भुजाओं, अस्त्र-शस्त्रों के आविर्भाव के बाद देवी ने अपने रूप को उपसंहत कर लिया। इस विषय में एक कथा का वर्णन किया गया है, वह इस प्रकार है—प्राचीन काल मे गुह्यकाली अपनी सखियों के साथ क्रीडा कर रही थी। उसी दिन गौतम ऋषि के तीन दौहित्र अपने पिता को मारने की इच्छा से आधी रात को वहाँ आ गये। उन ब्राह्मणों को वहाँ उपस्थित देख और उनके कृत्य को जानकर द्वीपिनी ने शवसहित उन ब्राह्मणों को खा डाला। इस पर गुह्यकाली ने द्वीपिनी से कहा कि तुमने ब्रह्महत्या की है अतः तुम ब्रह्महत्या की भागिनी हो। गुह्यकाली ने अपने प्रभाव से पितासहित पुत्रों को जीवित कर दिया और स्वयं अन्तर्हित हो गयी। काली के विभिन्नरूपवर्णन के क्रम में चौबीस मुखों वाली की दश भुजायें हैं। तीस मुखों वाली काली के एक-सौ बहत्तर पैर हैं। भुजाओं की संख्या ८७ हैं। अस्सी मुखों वाली काली की भुजायें ८८०० है। ये सब अपने-अपने हाथों में अस्त्र-शस्त्र धारण की हुई हैं।

महावाक्य दो प्रकार के हैं—१. भावना महावाक्य और २. क्रिया महावाक्य। भावना वाक्य के स्वरूप हैं—तत्त्वमसि, तत्त्वमस्मि, अयमात्मा ब्रह्म, अहं ब्रह्मास्मि, अयमात्मा सा—इन वाक्यों के ऋषि, छन्द बीज भिन्न-भिन्न हैं, किन्तु देवता एकमात्र गुह्यकाली है। क्रिया महावाक्य का उपयोग क्रिया में ही दिखलायी पड़ता है। यह महावाक्य योगियों का छत्तीस, वैदिकों का बीस और तान्त्रिकों का चार है। वह इस प्रकार है—१. शक्तेर्जातः शिवः स्वयमन्तेऽस्याः लयमेष्यति। २. परमात्मनः समुत्पन्नो जीवात्मा जन्महेतवे। ३. जीवात्मनः प्रजातानि तन्मात्राणीन्द्रियाणि च। लयमेष्यन्ति तत्रान्ते। ४. अमृतात् तीर्थमुत्थितं लयमेष्यति चान्तेऽत्र।

इस प्रकार इस पटल में उपासकों एवं देवी के भेद बतलाये गये हैं। एक मुख से लेकर अनेक मुखों वाली काली के एक अक्षर से लेकर दश सहस्र अक्षर तक के मन्त्रों का स्वरूप, उनके ऋषि, छन्द, बीज आदि के वर्णन के साथ यह पटल समाप्त हुआ।

**तृतीय पटल**—इस पटल में विभिन्न उपासकों के द्वारा प्रयुक्त मन्त्रों का उद्धार, उसकी देवी, शक्ति, कीलक आदि का वर्णन बतलाया गया है। उसकी तालिका इस प्रकार है—

दोनों प्रकार के अयुताक्षर मन्त्रों के वर्णों की संख्या का न्यूनाधिक्य न हो एतदर्थ सौ-सौ के क्रम से अक्षरों का निर्देश किया गया है । शताक्षर मन्त्र से लेकर अयुताक्षर मन्त्रों के जप की महिमा का निर्देश तत्तत् मन्त्रोद्धार के पश्चात् विहित है । उक्त मन्त्रों की फलश्रुति के सन्दर्भ में कहा गया है कि इस मन्त्र को लिखकर घर में रखने से लक्ष्मी, पाठ से मृत्यु से छुटकारा, जप से समस्त सिद्धियाँ और शरीर पर धारण करने से मोक्ष मिलता है । तपस्या करने, वेदपाठ, यज्ञ आदि के करने पर भी विना इस मन्त्र के मोक्ष नहीं मिलता । अत्रि आदि समस्त ऋषियों, गोत्र प्रवर्त्तकों ने वेद आदि की उपेक्षा कर इसका अनुष्ठान किया और अपने-अपने अभीष्ट की सिद्धि प्राप्त किये । इसी प्रकार विभिन्न मन्वन्तरों में उत्पन्न होने वाले राजर्षिगण भी इस मन्त्र के प्रभाव से सारे मनोरथों को प्राप्त किये ।

**चतुर्थ पटल**—इस पटल में शाम्भव आदि छह उत्तम मन्त्रों का वर्णन किया गया है । ये छह मन्त्र इस प्रकार हैं—१. शाम्भव, २. तुरीया, ३. निर्वाण, ४. महाशाम्भव, ५. महातुरीया और ६. महानिर्वाण । शाम्भव पुरुष मन्त्र है, तुरीया स्त्री जाति और दोनों के सामरस्य से निर्वाण मन्त्र बनता है । इस मन्त्र की दीक्षा का अधिकारी वह पुरुष होता है जो ५० वर्ष के ऊपर आयुवाला, सत्यवक्ता, द्वन्द्व-सहिष्णु, कन्दमूलफलाशी, पाशुपतीदीक्षा-प्राप्त तथा अन्य शास्त्रीय नियमों का पालन करने वाला हो । तत्तत् मन्त्रों के अधिकारी की कुछ अपनी विशेषतायें होती हैं । महातुरीया मन्त्र का अधिकारी परमहंस के समान होता है । अपने शरीर को शव समझता हुआ वह जीवन्मुक्त की भाँति संसार में विचरण करता है ।

इसके पश्चात् ब्रह्मा की सृष्टि की चर्चा करते हुए कहा गया है कि ब्रह्मा लोग भी पुनर्जन्म ग्रहण करते रहते हैं । इस विषय में वासनामूलक संसार की कथा कहते हुए बतलाया गया कि किसी ब्रह्मा ने अपनी मृत्यु के बाद पुनः अतीत जन्म की बातों को ध्यान में रखते हुए पुनर्जन्म की इच्छा की । परिणामस्वरूप वे सृष्टि के प्रारम्भ में भृगुपुत्र हुए । मरने के बाद फिर दानव हुए । इसके पश्चात् वे इन्द्र के द्वारा मारे गये । इसके पश्चात् वासनावश वे क्रमशः सर्प, राक्षस, यक्ष, मनु एवं चक्रवर्ती राजा हुए । इसके बाद पाँच सौ बार ब्राह्मण, पाँच सौ बार वैश्य, चार सौ बार शूद्र, तीन सौ बार निषाद, बारह सौ बार चाण्डाल, आठ सौ बार धीवर, दो सौ बार धीवर, छह सौ बार यवन, नौ सौ बार आभीर, नौ सौ बार मोची, एक हजार जन्म बाघ और इसी प्रकार अनेक योनियों में भ्रमण करते हुए शाण्डिल्य गोत्र के देवल वंश में चक्षुरि नाम वाले श्रेष्ठ मुनि हुए । केतुमाल पर्वत पर एक वृक्ष के नीचे बैठकर बृहद्रथन्तर आदि साम सूक्तों का गान करते थे । इसके बाद पुनः पुनः जन्म लेते हुए बत्तीस करोड़ जन्मों के बाद वे फिर ब्रह्मा बनेंगे ।

जन्म और मृत्यु का कारण पाप-पुण्य दोनों होते हैं । किसी जीव के कितने बार जन्म-मृत्यु होंगे, यह कहना कठिन है । इतना निश्चित है कि ब्रह्माओं की

संख्या एक हजार ही होती है, न कम न अधिक । ये ही बार-बार जन्म-मृत्यु को प्राप्त होते हैं । इनमें से जो निर्वेदयुक्त हो जाते हैं वे मुक्त हो जाते हैं । ऐसा महानिर्वाण मन्त्र के जप के प्रभाव से होता है । अन्य जीव भी महानिर्वाण मन्त्र के प्रभाव में ब्रह्म के साथ एक हो जाते हैं । किन्तु भोग की महिमा अद्‌भुत है । बड़े-बड़े सिद्ध योगी भी भोग की आकांक्षा के कारण जन्म-मृत्यु के जाल में पतित हो जाते हैं ।

उपर्युक्त छह मन्त्रों का फल भी पृथक्-पृथक् है । इन सबमें महानिर्वाण मन्त्र का फल अपुनरावृत्ति है । उक्त छह मन्त्रों के विषय में गृहस्थों का अधिकार नहीं है । यति और वैखानस ही इनके जप के अधिकारी हैं किन्तु जो गृहस्थ मोक्ष की इच्छा रखता है उसका भी इन मन्त्रों के जप का अधिकार है । इसके पश्चात् इस पटल में मन्त्रोद्धार के विशिष्ट नियमों की चर्चा की गयी है । इस क्रम में सर्वप्रथम ब्रह्मप्रतिष्ठा के द्वारभूत शाम्भवयन्त्र का उद्धार, उसके ऋषि आदि का निर्देश करने के बाद महाशाम्भव, तुरीया, महातुरीया, निर्वाण, महानिर्वाण मन्त्रों की महिमा उसके ऋषि आदि का पृथक्-पृथक् वर्णन कर उनके उद्धार की चर्चा के साथ पटल की समाप्ति की गयी है ।

**पञ्चम पटल**—इस पटल का विषय यन्त्र है । इस प्रक्रम में कहा गया है कि बिना पूजा के जप और बिना यन्त्र के पूजा नहीं करनी चाहिये । एक-एक मन्त्र का विशिष्ट यन्त्र होता है । एक मन्त्र की दूसरे यन्त्र पर पूजा करने से इष्टहानि अनिष्टलाभ होता है । जिस प्रकार मन्त्रों का स्वरूप एकाक्षर से लेकर दशसहस्र अक्षर तक का है, उसी प्रकार यन्त्र भी भिन्न-भिन्न है । इसके पश्चात् प्रथम यन्त्र से लेकर चौबीस यन्त्रों का पृथक्-पृथक् स्वरूप बतलाया गया है । इन सभी यन्त्रों में बिन्दु, कोण, वृत्त, कमल और अक्षर का प्रयोग किया जाता है । बिन्दु तो एक ही रहता है किन्तु कोण, वृत्त, कमल के दल, अक्षरों की संख्या में भिन्नता पायी जाती है । इन यन्त्रों के अधिष्ठातृ देव भी भिन्न-भिन्न होते हैं । किसी यन्त्र के विधाता अर्थात् ब्रह्मा, काम, वरुण, किसी के वैश्वानर, अदिति, इन्द्र, किसी के दानव, मृत्यु, कौल आदि उपासक कहे गये हैं ।

उपर्युक्त प्रत्येक मन्त्र की पृथक्-पृथक् गायत्री भी है । जिस मन्त्र की जो गायत्री है, उसी गायत्री से उस मन्त्र का जप करने का विधान है अन्य से नहीं । गायत्री-निर्माण के सामान्य नियम की चर्चा करते हुए कहा गया है कि इसमें तीन पाद होते हैं; तीन कर्त्ता होते हैं । पहले के दो पद ङेऽन्त अर्थात् चतुर्थी एकवचनान्त होते हैं । अन्त में एक सुबन्त होता है । विशेष नियम के लिये कहा गया है कि पहले 'विद्महे' मध्य में 'धीमहि' और अन्त में 'प्रचोदयात्' कहा जाता है । सबके पहले कहीं बीज लगाया जाता है कहीं नहीं । जैसे—एकाक्षर मन्त्रोपास्या देवता की गायत्री में पहले बीज जोड़ा गया है—ह्रीं भगवत्यै विद्महे महामायायै

धीमहि तन्नो रौद्री प्रचोदयात् । किन्तु वरुणोपास्या गायत्री में बीज नहीं जोड़ा गया—लम्बोदर्यै विद्महे वेगभालायै धीमहि तन्नः सृष्टिः प्रचोदयात् । इस प्रकार एकाक्षर मन्त्रोपास्या देवता से लेकर काम, वरुण, अनल, सूर्य, शची, दानव, मृत्युकाल, भरत, च्यवन, हारीत, जाबाल, दक्ष, राम, हिरण्यकशिपु, ब्रह्मा, वसिष्ठ, विष्णुतत्त्व, अम्बाहृदय, रुद्र, विश्वेदेव, रावण के द्वारा उपासित देवताओं की गायत्री का वर्णन करने के बाद जयमङ्गला नामक गायत्री का उद्धार बतलाया गया है । इसके पश्चात् भोगविद्यामन्त्र, शताक्षरमन्त्र, सहस्राक्षरमन्त्र, विष्णूपास्यायुताक्षरमन्त्र, शिवोपास्य अयुताक्षरमन्त्र, शाम्भवमन्त्र, महाशाम्भवमन्त्र, तुरीयामन्त्र, महातुरीयामन्त्र, निर्वाण-मन्त्र, महानिर्वाणमन्त्र की गायत्री का वर्णन किया गया है ।

आगे चलकर षडङ्गन्यास का सामान्य नियम बतलाते हुए कहा गया कि करन्यास और अङ्गन्यास दोनों का मन्त्र एक ही होता है । अङ्गुष्ठा और हृदय का मन्त्र 'नमः', तर्जनी और शिर का मन्त्र 'स्वाहा' मध्यमा और शिखा का 'वषट्' अनामिका और कवच का 'हुम्', कनिष्ठा और नेत्रत्रय का 'वौषट्' तथा करतल-करपृष्ठ और अस्त्र का 'फट्' होता है । इसके अनन्तर पूर्वोक्त की भाँति एकाक्षर से लेकर महानिर्वाण तक के सभी बत्तीस मन्त्रों के षडङ्गन्यासों का विस्तृत वर्णन किया गया है । महानिर्वाण मन्त्र के सामान्य-विशेष—दोनों प्रकार के न्यासों की चर्चा की गयी है । अन्त में इस पटल के विषय का संक्षिप्त वर्णन कर भगवान् शिव ने कहा कि जो कुछ इसमें अनुक्त है, उसका ऊह कर लेना चाहिये । भीमातन्त्र एवं वामकेश्वरसंहिता में ध्यान की चर्चा की गयी है । वहाँ से इसका संग्रह कर लेना चाहिये । आगे चलकर शिव ने गुह्यकालीखण्ड में प्रतिपादयिष्यमाण विषयों की चर्चाकर कहा कि सम्पूर्ण आगमशास्त्र में पचपन कालियों का वर्णन उपलब्ध होता है । इन सबमें गुह्यकाली मुख्य है । चूँकि यह समस्त कालियों में गुह्य है अतः इसे गुह्यकाली कहा गया है ।

...~~~...

# विषयानुक्रमणिका

| विषयाः | पृष्ठाङ्काः |
|---|---|

...ঌ❀ঌ...

।। श्रीः ।।

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला
४०३

# महाकालसंहिता

## (गुह्यकालीखण्डः)

[ द्वितीयो भागः * ६-९ पटलात्मकः ]

ज्ञानवतीहिन्दीभाष्येण विभूषिता

व्याख्याकारः सम्पादकश्च

**आचार्य राधेश्याम चतुर्वेदी**

व्याकरणाचार्यः एम.ए.(संस्कृत), पीएच.डी., लब्धस्वर्णपदकः
शास्त्रचूडामणिविद्वान्
इमेरिटस प्रोफेसर एवं अध्यक्षः, संस्कृत विभागः
देवसंस्कृतिविश्वविद्यालयः, गायत्रीकुञ्जशान्तिकुञ्जः, हरिद्वार
(पूर्वाचार्यः) संस्कृतविभागः, कलासंकायः
काशीहिन्दूविश्वविद्यालयः, वाराणसी

**चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन**
वाराणसी

# गुह्यकालीखण्ड— २

(६-९ पटल)

## संक्षिप्त परिचय

**षष्ठ पटल**—इस पटल का विषय नित्यकृत्य गुह्यकालीपूजा, वस्तुशोधन तथा न्यास है। इस प्रक्रम में सबसे पहले प्रातःकृत्य सम्पादित करने के बाद नवीन वस्त्र धारणकर शिरस्थ शुक्लकमल में गुरु का ध्यान करना चाहिये। तत्पश्चात् देवी की आज्ञा लेकर स्नान, तिलक, भस्म धारण करने के बाद चन्दन धारण करने का विधान बतलाया गया है। अघमर्षण के पश्चात् देवी का उपस्थान, उसे बारह अञ्जलि दान देने के पश्चात् गुह्यकाली की पूजा का प्रारम्भ करना चाहिये।

इस क्रम में पाद-प्रक्षालन, आचमन, शिखाबन्धन अधिष्ठान करने के बाद पूजा के प्रकार का वर्णन किया गया है। पूजा उपचार के चार प्रकार हैं— १. पञ्चोपचार, २. दशोपचार, ३. षोडशोपचार एवं ४. द्वात्रिंशदुपचार। अन्तिम को राजोपचार भी कहते हैं। इस प्रकार की पूजाओं में भूमिशोधन, आसनशुद्धि, उपचारशुद्धि, कायवाक्चित्तशुद्धि अवश्यकरणीय होती है।

षोडशोपचार का विवरण इस प्रकार है—(१) आसन, (२) पाद्य, (३) अर्घ्य, (४) आचमन, (५) मधुपर्क, (६) स्नानजल, (७) वस्त्र, (८) आभूषण, (९) गन्ध, (१०) पुष्प, (११) धूपदीप, (१२) अञ्जन, (१३) नैवेद्य, (१४) आचमन, (१५) प्रदक्षिणा और (१६) नमस्कार।

पाद्य, अर्घ्य, आचमन, स्नान, पात्र, वस्त्र की चर्चा के क्रम से उनका शोधन तथा उत्तम, मध्यम और अधम स्वरूप भी बतलाया गया है। गन्ध, पुष्प-शोधन की चर्चा के साथ देवी के लिये विहित और निषिद्ध पुष्पों की चर्चा की गयी है। इसी प्रकार धूप, दीप, अञ्जन, नैवेद्य के प्रकार एवं शोधन का वर्णन किया गया है। नैवेद्य में कच्चा मांस, भैंस का दूध आदि देने का विधान है। लहसुन, प्याज तथा अन्य निषिद्ध पदार्थ को वर्जित रखना चाहिये।

षोडशोपचार वर्णन के बाद राजोपचार का वर्णन है। इसमें—(१) आवाहन, (२) स्वागत, (३) संस्थापन, (४) सन्निधापन, (५) सन्निरोधन, (६) सम्मुखीकरण, (७) सकलीकरण, (८) अवगुण्ठन, (९) अमृतीकरण, (१०) सिन्दूर, अलक्तक, (११) ताम्बूल, (१२) पादुका, (१३) पत्रोर्ण (१४) छत्र, चामर, व्यजन, (१५) आरती, (१६) पुष्पमाला एवं आत्मनिवेदन अधिक हैं।

इन बत्तीस उपचारों में प्रत्येक उपचार के शोधन का मन्त्र भी बतलाया गया है । बलि के सन्दर्भ में कहा गया है कि ब्राह्मण को मदिरा की बलि नहीं देनी चाहिये । आगे चलकर प्रसङ्गवश उन ऋषियों के नाम गिनाये गये हैं जिन्होंने सदा सात्त्विक उपचारों से देवी की पूजा की । मदिरा का समर्पण केवल शूद्र के लिये विहित है । यदि ब्राह्मण मदिरा का अर्पण करना ही चाहता है तो उसे अनुकल्प देना चाहिये । मदिरा के बारह प्रकार के अनुकल्पों का वर्णन करने के बाद उसके शोधन का मन्त्र बतलाया गया है ।

कामपीठ आसन के बाद भूतशुद्धि, भूतापसारण विधि की चर्चा करने के पश्चात् प्राणायाम, मातृकान्यास का वर्णन किया गया है । गुह्यकाली के सामान्य मातृकान्यास एवं विशेषमातृकान्यास दोनों की चर्चा करने के पश्चात् विराट्मातृकान्यास का महत्त्व बतलाते हुए कहा गया है कि अन्य किसी भी न्यास को न कर केवल मातृकान्यास को करनेवाला भोग और मोक्ष दोनों को प्राप्त करता है । आगे चलकर महाकाल ने बतलाया कि पचास नरसिंह नामों को पचास काली शक्तियों के साथ विशिष्ट रूप से जोड़ने पर न्यासकर्म जो फल देता है उसका वर्णन मैं नहीं कर सकता । इसकें पश्चात् ज्वालामाली आदि पचास नृसिंह नाम तथा धूमकाली जयकाली आदि पचास काली शक्तियों का वर्णन किया गया है ।

गुह्यकाली की पूजा में विराट् न्यास का अनुष्ठान आवश्यक होता है । अन्य न्यासों को न कर सकने वाले को भी यह न्यास अवश्य करना चाहिये । इसके अनन्तर पीठन्यास की चर्चा की गयी है । पीठन्यास का अङ्गभूत षडङ्गन्यास है । इस न्यास को करने के बाद पीठन्यास करना चाहिये । योगरत्नपीठन्यास के ऋषि आदि का वर्णन करने के पश्चात् इस न्यास का वर्णन किया गया है । इस क्रम में महामण्डूक आदि सोलह पदार्थों का हृदय में, कृतयुग आदि बारह का स्कन्ध आदि में, हृत्कमल के अष्टदलों में असिताङ्ग आदि आठ भैरवों का, फिर शिरस्थ अष्टदल कमल के आठ दलों में शिव, परशिव आदि आठ शिवों का न्यास करने की विधि है । हृदय के मध्य में परिकल्पित अष्टदल कमल में धर्मज्ञान आदि आठ का न्यास करना चाहिये । इसी प्रकार बत्तीस दल वाले हृदयकमल के बत्तीस केसरों में काली आदि बत्तीस देवियों के न्यास का विधान है । अन्त में योगरत्नन्यास के माहात्म्य का उल्लेखकर पटल को समाप्त किया गया है ।

**सप्तम पटल**—प्रस्तुत पटल का विषय न्यासों का उद्धार है । इसमें पचीस न्यासों की चर्चा की गयी है । वक्त्रन्यास से लेकर तत्त्वन्यास तक के पचीस न्यासों के स्वरूप का वर्णन कर तत्तद् न्यसनीय अङ्ग का वर्णन और अन्त में उनके ऋषि आदि को बतलाया गया है । अन्त में फलश्रुति कही गयी है । अगले पृष्ठ पर दी गई तालिका से सम्पूर्ण पचीस न्यास का स्वरूप स्पष्ट हो जायेगा ।

इसके बाद सोलह योगिनियों के नाम दिये गये हैं। वे नाम हैं—(१) चर्चिका, (२) डामरी, (३) सूर्यकिर्णी, (४) तापिनी, (५) कुम्भोदरी, (६) फेरुमुखी, (७) मर्दिनी, (८) जातहारिणी, (९) विडालाक्षी, (१०) दीर्घनखा, (११) सूचीतुण्डी, (१२) शोषिणी, (१३) कपालिनी, (१४) चण्डघण्टा, (१५) कुरुकुल्ला और (१६) बलाकिनी।

इसके बाद दूसरे पञ्चन्यासों का वर्णन किया गया है। इसके कुलतत्त्व, सिद्धिचक्र, कैवल्य, अमृत और जयविजय न्यासों की चर्चा है। कुलतत्त्वन्यास के ऋषि परमेष्ठी, छन्द अतिजगती, देवता कुलदेवियाँ, बीज ह्स्ख्फ्रें, शक्ति रक्षफ्रछ्रौं और कीलक रजझक्षैं हैं। कुलतत्त्व के न्यास में इसका विनियोग होता है। इसके पश्चात् इस न्यास का उद्धार बतलाया गया है। इसके अन्त में इस न्यास की महिमा का वर्णन करते हुए कहा गया है कि इस न्यास को लिखकर राजघर में रखने पर वहाँ सिद्धियाँ मिलती हैं तथा विपत्तियों से मुक्ति लाभ होता है। इस न्यास का मूल उत्स कपालडामर तन्त्र है।

कुलतत्त्वन्यास के बाद सिद्धिचक्रन्यास की चर्चा की गयी है। इस न्यास के ऋषि रैभ्य, छन्द पंक्ति, देवता सर्वसिद्धियाँ हैं। बीज क्षखफ्रें, शक्ति रप्रौं, कीलक रक्ष्रों, तत्त्व रक्षफ्रछ्रौं है। इसका विनियोग सिद्धिचक्रन्यास में होता है। ऋषि आदि के वर्णन के बाद मन्त्र के उद्धार की प्रक्रिया बतलायी गयी है। इस न्यास के चौबीस मन्त्र हैं। यह न्यास ऐहिक अभ्युदय चाहने वालों के लिये नित्य करणीय है, पारलौकिक लक्ष्य के लिये इसे काम्य कहा गया है।

सिद्धिचक्रन्यास के बाद कैवल्य न्यास का वर्णन है। इसके ऋषि कपिल, छन्द त्रिष्टुप्, देवता गुह्यकाली, बीज ॐ, शक्ति ठौं, कीलक ई, तत्त्व स्हें है। इसका विनियोग मोक्ष के लिये होता है। इसमें ग्यारह मन्त्र हैं। पूर्वन्यास की भाँति इसकी भी करणीयता है।

चतुर्थन्यास अमृतन्यास के नाम से प्रसिद्ध है। इस न्यास के ऋषि कात्यायन, छन्द विराट्, देवता कामकला काली, कीलक क्लीं, शक्ति छ्रीं, बीज स्त्रीं है। इसका प्रयोग सिद्धिलाभ के लिये होता है। आगे चलकर इसके मन्त्रोद्धार की प्रक्रिया बतलाते हुए कहा गया है कि इसमें पचीस तत्त्व के दो प्रकार हैं। शरीर के शिर आदि पचीस अङ्गों में पचीस मन्त्रों के द्वारा न्यास किया जाता है।

अन्तिम न्यास जयविजय न्यास है। इसके ऋषि दक्ष, छन्द जगती, देवता गुह्यकाली, बीज ख्फ्रें, शक्ति ह्क्षम्लैं और कीलक हूं है। इस न्यास के सत्ताईस मन्त्र हैं। इस न्यास के मन्त्रों के सामान्य विशेष उद्धार की प्रक्रिया को बतलाने के बाद सत्ताईस अङ्गों के नाम बतलाये गये हैं।

**अष्टम पटल**—इस पटल का विषय भावना आदि दश न्यास है ।

**(१) भावना न्यास**—इस न्यास के ऋषि सदाशिव, छन्द बृहती, देवता गुह्यकाली, बीज क्षरख्राङ्क्रीं, शक्ति फ्रें, कीलक क्षहम्लव्य्रऊँ हैं । इस न्यास का प्रयोग कैवल्यपदप्राप्ति के लिये होता है । ऋष्यादि निर्देश के पश्चात् इस न्यास के उद्धार क्रम में पहले सामान्य नियम तत्पश्चात् विशेष शब्दों का वर्णन किया गया है। सामान्य नियम में समस्त मन्त्रों में स्थायी सात अक्षरों की चर्चा कर फिर अस्थायी वर्णों को बतलाया गया है । विशेष उद्धार में ४४० बीजाक्षरों का प्रयोग होता है । इसके बाद पचपन कूटों के नाम गिनाये गये हैं । कूटों का वर्णन करने के अनन्तर पचपन कालियों के नामों की चर्चा की गयी है । उसके पश्चात् पुनः कूटों को क्रम से बतलाया गया है । ये नाडीकूट पचपन की संख्या में हैं । इसके पश्चात् भावना न्यास के न्यसनीय स्थानों को बतलाया गया है । इन स्थानों की संख्या भी पचपन है । इस न्यास में जिन-जिन लोकों की भावना करणीय होती है वे लोक भी बतलाये गये हैं । लोकों की भी संख्या पचपन है ।

भावना न्यास की महिमा के सन्दर्भ में कहा गया है कि इसके समान कोई दूसरा न्यास नहीं है । यह देवों को देवत्व और सिद्धों को सिद्धि देता है । विरक्तों के लिये यह नित्य करणीय और गृहस्थों के लिये काम्य है । ग्रहणकाल, संक्रान्तियों, पर्वदिनों, पीठों और तीर्थों में इस न्यास को करना चाहिये । इस न्यास का अनुष्ठाता भावना के द्वारा साक्षात् शिव हो जाता है ।

**(२) समय न्यास**—समय न्यास के ऋषि अर्वावसु, छन्द गायत्री, देवता गुह्यकाली, बीज क्षह्रीं, शक्ति ह्स्ख्फ्रें और कीलक ख्फ्रों है । इसका विनियोग समय के पालन में होता है । पूर्व न्यास की भाँति इस न्यास का भी पहले सामान्य और बाद में विशेष उद्धार बतलाया गया है । इस न्यास के न्यसनीय अङ्गों की संख्या ब्रह्मरन्ध्र से लेकर व्यापक तक सत्ताईस हैं । इसकी महिमा एवं करणीयता का वर्णन करते हुए कहा गया है कि यह न्यास भावना न्यास के ही समान महत्त्वपूर्ण है । उत्तरकौल लोगों के लिये यह नित्य करणीय है किन्तु पञ्चमकार के अनुकल्प का प्रयोग करने वालों के लिये यह नैमित्तिक कहा गया है। अन्य लोगों के लिये यह काम्य है ।

**(३) सृष्टि न्यास**—यह न्यास सभी न्यासों में मुख्य है; क्योंकि देवी गुह्यकाली ने जिस-जिस रूप को धारणकर जो-जो सृष्टि की वह सब इस न्यास में निहित है । देवी के पाँच आकारों में से यह प्रथम आकार होने के कारण प्रधान कहा गया है। इस न्यास के ऋषि जमदग्नि, छन्द अत्यष्टि, देवता गुह्यकाली, बीज रजझ्क्ष्रूं, शक्ति छ्रक्षह्लीं, कीलक ह्स्ख्फ्रें है । इसका विनियोग सिद्धि प्राप्त करने के लिये होता है। इस न्यास में बत्तीस मन्त्र हैं । उद्धार के क्रम में पूर्वोक्त

न्यासों की भाँति इस न्यास का भी पहले सामान्य उद्धार बतलाया गया । तत्पश्चात् तैंतालिस श्लोकों के द्वारा विशेष उद्धार की चर्चा की गयी । जहाँ तक न्यासनीय अङ्गों का प्रश्न है पैर से लेकर व्यापक तक के बत्तीस अङ्ग न्यसनीय हैं ।

सृष्टि न्यास की महिमा की चर्चा करते हुए कहा गया है कि यह न्यास अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है । इसी की कृपा से प्रजापतियों ने सृष्टि की । जो मनुष्य इस न्यास का भक्तिपूर्वक अनुष्ठान करते हैं वे अनेक शास्त्रों और नाना मतों सम्प्रदायों के प्रवर्त्तक होते हैं । इस न्यास के द्वारा मनुष्य छह महीने में वाक्सिद्धि प्राप्त कर लेता है ।

**(४) स्थिति न्यास**—इस न्यास के ऋषि कालकवृक्षीय, छन्द शक्वरी, देवता गुह्यकाली, बीज रहछ्रक्षह्रौं, शक्ति रज्रझ्क्ष्रौं, कीलक रक्षफ्रछ्रौं है । इसका विनियोग सर्वदा समस्त कार्यों की सिद्धि के लिये होता है । इस न्यास में भी बत्तीस मन्त्र हैं। पूर्वोक्त न्यासों की भाँति यहाँ भी पहले सामान्य उद्धार बतलाया गया । उसके बाद विशेष उद्धार की चर्चा की गयी है । पाँच-पाँच की संख्या में बत्तीस बीजसमूह एवं एक-एक कूट कहे गये हैं । तदनन्तर बत्तीस कल्पों के नाम बतलाये गये हैं । इसके पश्चात् बत्तीस नरसिंहों तथा उतनी ही कालियों के नाम गिनाकर अन्य योजनीय शब्दों को कहा गया है ।

न्यसनीय स्थानों की संख्या ब्रह्मरन्ध्र से लेकर व्यापक तक बत्तीस है । इस न्यास के महत्त्व का अनुमान इसी से होता है कि इस न्यास का प्रतिदिन अनुष्ठान कर विष्णु ने विष्णुत्व प्राप्त किया । अत: कल्याणेच्छु साधक को चाहिये कि वह इसका नित्यप्रति प्रयत्नपूर्वक अनुष्ठान करे ।

**(५) संहार न्यास**—संहार न्यास के ऋषि संवर्त्त, छन्द, त्रिष्टुप्, देवता गुह्यकाली, बीज ह्स्फ्रें, शक्ति खफ्रें, कीलक ह्स्ख्फ्रें कहा गया है । इसका प्रयोग सिद्धिलाभ के लिये होता है । पूर्व प्रक्रिया का अनुसरण करते हुए इसका भी पहले सामान्य उद्धार बतलाया गया बाद में इसके विशेष उद्धार की चर्चा की गयी है । यहाँ भी मन्त्रों की संख्या बत्तीस है । प्रत्येक मन्त्र के साथ तीन-तीन बीज और दो-दो कूट जुड़ते हैं । इस न्यास के न्यसनीय अङ्ग भी बत्तीस हैं, जो संहारक्रम वाले हैं अर्थात् पैर से लेकर ब्रह्मरन्ध्र तक ।

इसके महत्त्व का वर्णन करते हुए बतलाया गया है कि यह न्यास गुह्यकाली को महासन्तुष्टि प्रदान करता है । धर्म, अर्थ, अमरत्व चाहने वालों को इसे भक्तिपूर्वक करना चाहिये । संन्यासियों के लिये यह नित्यकरणीय है । गृहस्थ लोग इसे इच्छा होने पर कर सकते हैं । कौलमार्गी साधकों के लिये यह नैमित्तिक है । विद्यार्थी लोगों के द्वारा किये जाने पर पाठशून्य विद्यार्थी की वाणी गद्यपद्यमयी हो जाती है ।

**(६) अनाख्या न्यास**—इस अनाख्या न्यास के ऋषि कपिल, छन्द अतिशक्वरी, देवता गुह्यकाली, बीज स्हजह्लक्ष्म्ल्वनऊं, शक्ति क्वलह्झकह्नसक्लईं, कीलक ब्रकम्लव्लक्लऊं है । इसका विनियोग कैवल्यपद की प्राप्ति के लिये होता है । अन्य न्यासों की भाँति इस न्यास का भी पहले सामान्य और बाद में विशेष उद्धार बतलाया गया है । यहाँ भी मन्त्रों की संख्या बत्तीस है । इसके महत्त्व के विषय में कहा गया है कि यह अव्यवहित पूर्वोक्त न्यास की भाँति नित्य, नैमित्तिक और काम्य है ! इस न्यास को करने वाले साधक को अन्य न्यास करने की आवश्यकता नहीं होती और इस न्यास को न करने वाले के द्वारा अन्य न्यास का अनुष्ठान भी व्यर्थ होता है । भासा न्यास के स्थान ही अनाख्या न्यास के स्थान हैं।

**(७) भासा न्यास**—इस न्यास के ऋषि सदाशिव, छन्द वृहती, देवता गुह्यकाली, वीज ॐ, शक्ति ऐं, कीलक फ्रें और तत्त्व ख्फ्रें है । इसका विनियोग कैवल्य-लाभ के लिये होता है । यह मुमुक्षुओं के लिये नित्यकरणीय तथा अन्य साधकों के लिये काम्य है । जहाँ तक इसके उद्धार का प्रश्न है पहले इसका सामान्य और बाद में विशेष उद्धार बतलाया गया । इसमें भी मन्त्रों की संख्या बत्तीस है । पाँच-पाँच बीजों के बत्तीस समूह और अन्त में बत्तीस कूट कहे जाते हैं । इस न्यास के स्थान शिर से लेकर पैर तक पुनः व्यापक इस प्रकार बत्तीस अङ्ग होते हैं ।

भासा न्यास के महत्त्व को बतलाते हुए कहा गया है कि यह अनाख्यान्यास से भी गूढतर है । स्थिति और संहार न्यास यदि जाग्रत् और स्वप्न के समान हैं तथा अनाख्या न्यास सुषुप्तिवत् है तो भासा न्यास तुरीया अवस्था के समान है । जैसे तुरीय अवस्था प्राप्त व्यक्ति का पुनर्जन्म नहीं होता, उसी प्रकार भासा न्यास का अभ्यास करने वाले साधक को संसार-बन्ध में नहीं आना पड़ता । अनाख्या न्यास का अभ्यासी कदाचित् बन्धन में पड़ सकता है किन्तु भासा न्यास का अभ्यास करने वाला करोड़ों सृष्टि में भी जन्म नहीं लेता । यह मोक्षेच्छुओं के लिये नित्यकरणीय तथा अन्य लोगों के लिये काम्य है । इसकी नैमित्तिकता नहीं है ।

**(८) मन्त्र न्यास**—मन्त्र न्यास के ऋषि महारुद्र, छन्द मध्या, देवता गुह्यकाली, बीज क्षस्हम्लव्य्रऊं, शक्ति क्षह्लम्लव्य्रऊं कीलक क्षस्हम्लव्य्रईं है । इसका विनियोग गुह्यकाली की प्रसन्नता के लिये होता है । इस न्यास का उद्धार पूर्ववर्णित उद्धारों से भिन्न है । इस प्रसङ्ग में जो क्रम अपनाया गया है वह विचित्र है । गुह्यकाली के एकाक्षर से लेकर महानिर्वाण तक के मन्त्रों के द्वारा बत्तीस स्थानों में न्यास करने का निर्देश है ।

इस न्यास की महत्ता इसमें है कि जिनकी मान्त्री दीक्षा हो चुकी है वे तो बत्तीस मन्त्रों का न्यास करें किन्तु अदीक्षित लोग छब्बीस मन्त्र तक ही न्यास के

अधिकारी हैं । उनको इतने से ही सम्पूर्ण न्यास का फल मिल जाता है । यह न्यास मोक्ष के लिये करना चाहिये । संन्यासियों के लिये यह नित्य करणीय तथा अन्य लोगों के लिये काम्य है । इस न्यास को कौलाचारी तथा शूद्र भी करने के अधिकारी हैं । पतित ब्राह्मण इस न्यास को न करे अन्यथा उसकी तत्काल मृत्यु हो जायगी । इसी प्रकार पतित स्त्रियों का भी इसको करने में अधिकार नहीं है । जिनको एकाक्षर से लेकर महानिर्वाण तक के मन्त्रों की दीक्षा दी जा चुकी है । उन्हें ही यह न्यास करना चाहिये । अदीक्षित व्यक्ति पुस्तक में लिखित को देखकर यदि यह न्यास करता है तो वह योगिनियों का भक्ष्य हो जाता है ।

**(९) सिद्धि न्यास**—इस न्यास के ऋषि काङ्क्षायन, छन्द बृहती, देवता गुह्यकाली, बीज.........., शक्ति......., बीज....... है । इसका प्रयोग समस्त कार्यों की सिद्धि के लिये होता है । इसका सामान्य उद्धार बतलाने के बाद विशेष उद्धार बतलाया गया है । सिद्धि न्यास के स्थान ब्रह्मरन्ध्र से लेकर जङ्घा पद के साथ व्यापक है । इनकी संख्या सत्ताईस है । इसके महत्त्व की चर्चा करते हुए कहा गया है कि इसका अभ्यासी निश्चित रूप से सिद्धि प्राप्त करता है । ब्रह्मा, विष्णु, राजा, ऋषि, देवता आदि ने इस न्यास के द्वारा सिद्धि प्राप्त की । गृहस्थों और कौलों के लिये यह नित्यकरणीय है । संन्यासी और निराकांक्ष व्यक्ति के लिये यह काम्य है । महाकाल का निर्देश है कि इस न्यास में आग्रह करना चाहिये । आग्रह के कारण सारी सिद्धियाँ वश में हो जाती हैं ।

**(१०) विराट् न्यास**—इस न्यास के ऋषि लाट्यायन है । छन्द जगती, देवता ब्रह्माण्ड, बीज सहक्षम्लव्रईं, शक्ति क्षस्हम्लव्रईं, कीलक क्षहम्लव्रईं, तत्त्व झसखग्रमऊं है । इसका विनियोग कैवल्य पदलाभ के लिये होता है । इस न्यास का भी सामान्य और विशेष उद्धार बतलाया गया है । विशेष उद्धार में बीजों एवं कूटों का प्रयोग किया गया है । इस न्यास के न्यसनीय स्थान मन्त्रोद्धार के समय ही बतला दिये गये हैं ।

इसके महत्त्व की चर्चा करते हुए कहा गया कि यह न्यास किसी भी तन्त्र ग्रन्थ में नहीं मिलता । इस न्यास को काम्य के रूप में कभी नहीं करना चाहिये । ऐसा करने वाला योगिनियों का भक्ष्य हो जाता है । दीक्षित लोगों के लिये यह नित्यकरणीय है । जो नित्य नहीं कर सकते वे विशेष पर्व पर इसे करें । मोक्षेच्छु लोग गृहस्थ कौल मार्गी लोगों के लिये यह विहित है । इस न्यास का ज्ञान केवल काली और त्रिपुरारि को ही है ।

**नवम पटल**—इस पटल का भी विषय न्यास है ।

**बीज न्यास**—यहाँ पाँच न्यासों के समूह का वर्णन है, उनमें प्रथम बीज न्यास है । इस न्यास के ऋषि प्रजापति, छन्द बृहती, देवता सारे पदार्थ, बीज ऐं

और शक्ति ईं है । कीलक सारे बीज कहे गये हैं । इसका विनियोग जगत् की सृष्टि में होता है । पूर्व पटल में वर्णित के समान यहाँ भी पहले सामान्य फिर विशेष उद्धार की चर्चा की गयी है । विशेष उद्धार के क्रम में एक-एक मन्त्र में तीन-तीन बीजों की पंक्तियाँ हैं । कुछ शब्द बीज के पूर्ववर्ती होते हैं, कुछ परवर्त्ती । बीज न्यास के न्यसनीय स्थल ललाट से लेकर पैर तक फिर दोनों पार्श्वों से लेकर ब्रह्मरन्ध्र और व्यापक है ।

**कूट न्यास**—कूट न्यास एक ऐसा न्यास है, जिसमें बीजों के मध्य तीन-तीन कूट रहते हैं । इसका मूल वज्र डामर तन्त्र में है । इसके ऋषि भुज्यु, छन्द मध या, देवता गुह्यकाली, बीज षट्चक्र, शक्ति झसखग्रमऊं (?) और कीलक स्हजहलक्षम्लवनऊं है । इसका विनियोग कैवल्य के लिये होता है । इसके भी सामान्य एवं विशेष दोनों प्रकार के उद्धारों का वर्णन किया गया है । इसके विशेषोद्धार में पाँच बीज स्थायी रहते हैं । फिर कूट और तीन-तीन बीजों की स्थायी पंक्ति रहती है । इसके न्यसनीय स्थान पैर से लेकर शिखा तक फिर मणिबन्ध कक्ष से लेकर पैर तक रहते हैं । कूट न्यास की महिमा बतलाते हुए कहा गया है कि जो लोग निर्वाण चाहते हैं उनके लिये यही एक न्यास है । यह संन्यासी, गृहस्थ, कौल सबके लिये विहित है ।

**क्रम न्यास**—पूर्व आदि छह आम्नायों की तत्तद् देवियों के तत्तत् मन्त्र का क्रम से वर्णन करने के कारण इस न्यास को क्रम न्यास कहा गया है । इस क्रम में उन देवियों की भी चर्चा क्रम से की जायेगी । इस क्रम न्यास के ऋषि सर्वा, छन्द प्रतिष्ठा, छह आम्नाय की देवतायें इसकी देवता हैं । बीज ह्स्खफ्रें, शक्ति रक्षफ्रछ्रूं और कीलक रजझक्ष्रूं है । इसका विनियोग क्रम न्यास में होता है । इस क्रम में पहले पूर्वाम्नायस्थ सोलह देवियों के मन्त्रों का उद्धार बतलाया गया है प्रत्येक देवी के मन्त्र पृथक्-पृथक् हैं । इन मन्त्रों में वर्णों की संख्या भी भिन्न-भिन्न है । इन देवियों के मन्त्रों से वामपार्श्व में न्यास होता है । पूर्वाम्नाय के पश्चात् दक्षिणाम्नाय की देवियों के मन्त्रों की चर्चा की गयी है । इनमें पहले देवी मातङ्गी है, जो सद्यः विश्ववशङ्करी है । यहाँ भी पूर्व की भाँति मन्त्रों का सम्पुट रहता है । चौदह मन्त्रों के पश्चात् छब्बीस अक्षरों से सम्पुट करे, अपनी तर्क बुद्धि से जोड़ना पड़ता है ।

इस आम्नाय में सोलह देवियाँ हैं । इन सोलह मन्त्रों के द्वारा दक्षिण पार्श्व में न्यास करना चाहिये । पश्चिमाम्नाय में भी सोलह मन्त्र है । इन मन्त्रों का उद्धार भी पूर्ववत् जानना चाहिये । उत्तराम्नायस्थ देवियों में पहली देवी गुह्यकाली है । इसके मन्त्रों की संख्या भी सोलह है । इन सोलह मन्त्रों के द्वारा हृदय में न्यास करना चाहिये । इसके पश्चात् ऊर्ध्वाम्नायस्थ देवियों के मन्त्र बतलाये गये हैं । इन आदिभूता देवी महात्रिपुरसुन्दरी है । इसमें भी सोलह मन्त्र हैं । इनके द्वारा ब्रह्मरन्ध्र

में न्यास होता है । अध: आम्नाय की प्रथम देवता भयानक भीमा देवी है । यहाँ भी सोलह मन्त्र है । इनसे दोनों पैरों में न्यास करने का विधान है ।

इसके अनन्तर षडाम्नाय देवियों में प्रमुख देवियों की चर्चा की गयी है । उसे निम्नलिखित तालिका से जानना चाहिये—

| क्र.सं. | आम्नाय | प्रधान देवी | |
|---|---|---|---|
| | | प्रथम | अन्तिम |
| १. | पूर्वाम्नाय | चण्डेश्वरी | हयग्रीवेश्वरी |
| २. | दक्षिणाम्नाय | मातङ्गी | वाग्वादिनी |
| ३. | पश्चिमाम्नाय | कुब्जिका | चर्चिका |
| ४. | उत्तराम्नाय | गुह्यकाली | कालसङ्कर्षिणी |
| ५. | ऊर्ध्वाम्नाय | त्रिपुरसुन्दरी | मोक्षलक्ष्मी |
| ६. | अध:आम्नाय | भीमादेवी | महाडाकिनी |

यह क्रम न्यास अन्य न्यासों की अपेक्षा अधिक उत्तम है; क्योंकि इसमें छह आम्नायों की देवियों और उनके मन्त्रों का एकत्र वर्णन मिलता है । विराट् न्यास और क्रमन्यास दोनों समान महत्त्व के हैं; क्योंकि विराट् में गुह्यकाली की विश्वरूपता और समस्त आम्नायों के अन्दर वर्णित देवियों की चर्चा है ।

**धातु न्यास**—इसके चर्चा क्रम में पहले धातुशब्द के अनेक अर्थों की चर्चा की गयी है । इस न्यास के ऋषि दृप्तबालाकि, छन्द सुप्रतिष्ठा, देवता गुह्यकाली, बीज ऐं, शक्ति आं, कीलक ईं और तत्त्व ओं है । इसका विनियोग कैवल्य लाभ के लिये होता है । इस न्यास का भी पहले सामान्य और बाद में विशेष उद्धार बतलाया गया है । इसके द्वारा न्यसनीय स्थान दक्षिणपाद के अङ्गुल्यग्र से लेकर सम्पूर्ण शरीर तक एक सौ इकसठ है । इन स्थानों की चर्चा करने के बाद व्यवह्रियमाण बीजों का वर्णन किया गया है । बीजों की संख्या भी उतनी ही है । इसके अधिकारी की चर्चा करते हुए कहा गया है कि गृहस्थ, संन्यासी, कौलमार्गी— ये सब इसके साधक हो सकते हैं । यह एक धातु न्यास सृष्टि आदि पाँच न्यासों के बराबर है ।

**तत्त्व न्यास**—तत्त्व न्यास संन्यासियों के लिये नित्य करणीय है । गृहस्थों एवं कौलमार्गियों के लिये काम्य है । कभी उक्त दोनों के लिये नैमित्तिक भी होता है । इस न्यास के ऋषि गर्ग, छन्द गायत्री, देवता गुह्यकाली, बीज ओं, शक्ति फ्रें और कीलक ऐं है । इसका प्रयोग तत्त्वज्ञान और जप में होता है । इस न्यास का सामान्य तथा विशेष दोनों प्रकार के उद्धारों को बतलाने के बाद इसमें विभिन्न

रूपों वाली पाँच बीजावलियों तथा छत्तीस कूटों की चर्चा की गयी है । जहाँ तक न्यसनीय स्थानों का प्रश्न है, गुल्फ से लेकर शिर शिखा व्यापक तक के स्थान है।

**लघुषोढा न्यास**—यह न्यास क्लिष्ट है । इसमें एक न्यास अङ्गी और छह अङ्ग है । इसीलिये इसको षोढा कहा गया है । यह न्यास सांसारिक अभ्युदय देता है, इसलिये इस न्यास को केवल गृहस्थ और कौलमार्गी ही कर सकते हैं, संन्यासी नहीं । इसके अनुष्ठान के समय बायीं जाँघ (गोद) पर शक्ति को बैठाना पड़ता है, तभी सिद्धि मिलती है । पूजाकाल में भी स्त्री को सामने बैठाने का विधान है । आगे चलकर संक्षेप में इसके उद्धार की चर्चा करने के बाद कहा गया कि साधक लालवस्त्र अथवा मृगचर्म पर बैठकर स्त्री को गोद में रखकर साधना करे । आसन गैंड़ा का चर्म या नरमुण्ड भी हो सकता है । षोढान्यास के नाम इस प्रकार हैं—उग्रमातृक्रम, कालीकुलक्रम, पीठक्रम, योगिनीक्रम, दैवतक्रम और मन्त्ररूपक्रम । इन न्यासों के ऋषि आदि पृथक्-पृथक् हैं । पञ्चक्रम षोढ़ान्यास के ऋषि सदाशिव, छन्द बृहती, देवता गुह्यकाली, बीज खं, शक्ति ह्रीं, कीलक खफ्रें, तत्त्व ह्स्ख्फ्रें है । इसका विनियोग सर्वसिद्धि के लिये है । इसके पश्चात् उग्र मातृकाक्रम न्यास का उद्धार बतलाया गया है ।

कालीकुलक्रम न्यास के ऋषि क्रोध भैरव, छन्द प्रतिष्ठा, देवता दक्षिण आदि नवकाली, बीज फें, शक्ति स्त्री, कीलक क्षौं, तत्त्व हुं है । इसका विनियोग गुह्यकाली की प्रसन्नता के लिये होता है । इसके पश्चात् इसका उद्धार बतलाया गया है । पीठन्यास के ऋषि कौषीतकि, छन्द अत्यष्टि, देवता राजराजेश्वरी, बीज ह्रीं, शक्ति खफ्रें, कीलक स्त्री और तत्त्व फ्रें है । इसका विनियोग गुह्यकाली की प्रसन्नता के लिये किया जाता है । योगिनीन्यास के ऋषि जम्भक, छन्द मध्या, देवता परापरचामुण्डा योगिनी, बीज छ्रीं, शक्ति ह्रीं, कीलक हूं, तत्त्व खफ्रें है । इस न्यास का मन्त्रोद्धार बतलाने के बाद दैवत न्यास बतलाया गया । दैवत क्रम न्यास के ऋषि प्रजापति, छन्द पंक्ति, देवता समस्त देवतायें, बीज ओं, कीलक ऐं, शक्ति आं और तत्त्व ह्रीं है । इसका प्रयोग सर्वसिद्धि के लिये है । इसके बाद इस न्यास के मन्त्र का उद्धार बतलाया गया है । इसके न्यसनीय स्थान ललाट से लेकर सत्ताईस अङ्ग हैं ।

मन्त्र क्रम न्यास के ऋषि भरद्वाज, छंन्द उष्णिक्, देवता समस्त मन्त्र, बीज ओं, शक्ति ह्रीं, कीलक रक्षश्रीं, तत्त्व हूं है । इसका प्रयोग सर्वाभीष्टसिद्धि के लिये होता है । ऋषि आदि की चर्चा करने के बाद इसके मन्त्र का उद्धार बतलाया गया है । गुह्यकाली के दश वक्त्रों के दश मन्त्र पृथक्-पृथक् हैं । दश वक्त्र निम्नलिखित हैं—(१) द्वीपी, (२) सिंह, (३) फेरु, (४) कपि, (५) ऋक्ष, (६) नर, (७) गरुड, (८) मकर, (९) गज और (१०) अश्व । इनके दश स्थान है—(१) ब्रह्मरन्ध्र, (२) ललाट, (३) दोनों नेत्र, (४) दोनों कान, (५) दोनों

कपोल, (६) हृदय, (७) शिर, (८) मूलाधार, (९) स्वाधिष्ठान, (१०) मणिपूर, (११) अनाहत, (१२) विशुद्धि और (१३) आज्ञा। दश वक्त्रों के अतिरिक्त दक्षिण वाम और मध्य वक्त्र मिलाकर तेरह स्थान न्यसनीय होते हैं। समस्त न्यासों में यह श्रेष्ठता है। इस न्यास की समाप्ति पर दो बलि देने का विधान है। तान्त्रिक के चार सम्प्रदाय हैं—१. कापालिक, २. भाण्डिकेर, ३. मौलेय और ४. दिगम्बर। ये सब न्यास के बाद शक्तिपूजा करते हैं। बाद में आत्मपूजा कर तान्त्रिक विसर्जन का वर्णन किया गया है।

लघु षोढान्यास के वर्णन के पश्चात् महाषोढान्यास का वर्णन है। इस महान्यास का नाम निर्वाण षोढान्यास भी है। जो साधक इस न्यास का प्रतिदिन अनुष्ठान करता है, वह तीनों लोकों को कम्पित कर देता है तथा समस्त सिद्धियाँ उसके हस्तगत हो जाती हैं। यह अत्यन्त गोपनीय है। इसका अनुष्ठान नीरव एकान्त स्थान में करना चाहिये। इस न्यास के ऋषि पञ्चशिख, छन्द अतिजगती, देवता हिरण्यकशिपु के द्वारा आराधिता से शतवक्त्रा तक की गुह्यकाली, बीज फ्रें, शक्ति खफ्रें, कीलक ह्स्ख्फ्रें और तत्त्व हसफ्रें हैं। इसके पश्चात् षडङ्गन्यास का कथन किया गया है। आगे चलकर इस न्यास के अन्तर्वर्ती तीर्थशिवलिङ्ग न्यास का वर्णन है। इस न्यास के ऋषि गौतम, छन्द अनुष्टुप्, देवता महातीर्थ और शिवलिङ्ग, बीज ओं, शक्ति ह्रीं, कीलक ऐं और तत्त्व आं है। सामान्य उद्धार बतलाने के बाद विशेष उद्धार बतलाया गया है। इसके बाद प्रयाग आदि इक्यावन तीर्थों के नाम गिनाये जाते हैं। तदनन्तर उक्त इक्यावन तीर्थों की अधिष्ठात्री ललिता आदि इक्यावन शक्तियों के नाम बतलाये गये हैं।

तीर्थ शिवलिङ्ग न्यास की महिमा के सन्दर्भ में सती के देहत्याग और उनके शरीर के इक्यावन खण्डों में काटे जाने की कथा का वर्णन करने के बाद जमदग्नि भरद्वाज आदि ऋषियों के नाम गिनाये गये हैं, जिन्होंने इस महान्यास का अनुष्ठान कर स्वाभीष्ट लक्ष्य को प्राप्त किया।

महाषोढान्यास के अन्तर्गत दूसरे पर्वतन्यास के वर्णन क्रम में कहा गया कि इसके ऋषि शैलूषिकुल्मकवर्हिष, छन्द उष्णिक्, देवता हिरण्यकशिपु की उपासिता गुह्यकाली, बीज रह्रीं शक्ति क्लफ्रां, कीलक ख्फ्रें, तत्त्व क्षह्रीं हैं। इसको बतलाने के बाद इसके षडङ्ग का वर्णन है। तदननतर सामान्य एवं विशेष उद्धार का वर्णन कर हिमालय आदि इक्यावन पर्वतों के नाम गिनाये गये हैं। इसके पश्चात् नरसिंह के इक्यावन नामों की चर्चा की गयी है। नरसिंह की इक्यावन शक्तियों के क्रम में विद्युत्केशी से आनन्ददायिनी तक के नाम हैं।

नृसिंह के साथ काली के सहवास की कथा का वर्णन किया गया, जो इस प्रकार है—एक समय की बात है कि पूर्वोक्त इक्यावन पर्वतों पर ऋषियों, मुनियों

और ब्रह्मर्षियों ने तपस्या प्रारम्भ की । उनके उग्र तप को देखकर दानवों ने उसमें विघ्न डालना प्रारम्भ किया । विघ्नों से आहत होकर उन ऋषि आदि तपस्वियों ने जगदम्बा की शरण ली । गुह्यकाली ने उनकी रक्षा के लिये अनेक उग्र शरीर धारण कर राक्षसों का संहार कर दिया । ऋषियों की प्रार्थना पर देवी ने प्रत्येक पर्वत पर धारण किये गये अपने शरीरों को जैसे का तैसा रखा और अपने निरञ्जन रूप तथा अपने पति को भूल कर स्वच्छन्द विचरण करने लगी । महारुद्र ने जब अपनी प्रियतमा गुह्यकाली को नहीं देखा तो उसे खोजने लगे । उन्होंने देखा कि वह अनेक उग्र रूप धारण कर पर्वत-पर्वत पर घूम रही है । देवी के उस भयङ्कर रूप को देखकर वे उसके पास जाने का साहस नहीं कर सके ।

सर्वज्ञ भगवती ने महारुद्र के मन की बात जान ली तथा मेघ गम्भीर वाणी से बोली—हे प्राणनाथ! आप मुझसे डरें नहीं । मेरी बात सुने । मैं इन घोर शरीरों को छोड़ना नहीं चाहती और अकेली रहना भी नहीं चाहती मैं आपके साथ मनोवाञ्छित भोग करना चाहती हूँ । आप अपने सौम्य शरीर से मेरे पास नहीं आ सकते । इसलिये आप नरसिंह का रूप धारण करें । यह सुनकर महारुद्र ने भयानक नृसिंह रूप धारण किया । देवी ने जब अपने साथ रहने योग्य शिव के रौद्र शरीर को देखा तो परम सन्तुष्ट हुई और उसने उसके ज्वालामाली आदि अनेक नाम रखे । तब से मुनिलोग शिव शक्ति के प्रीतिकारक इस महान्यास को करते हैं । इस पर्वत न्यास की महिमा इसी से समझनी चाहिये कि ऋषियों ने अन्य न्यासों को छोड़ दिया और केवल इस न्यास के द्वारा ही परम सिद्धि को प्राप्त किया ।

**नदी ऋषि न्यास**—निर्वाण षोढान्यास का तीसरा नदी ऋषि न्यास है । इसके ऋषि पारस्कर, छन्द आकृति, देवता गुह्यकाली, बीज क्षस्फ्रों, शक्ति क्ष्रूं, कीलक ख्रौं और तत्त्व श्रीं है । इसके अधिकारी मौलेय है वैदिक नहीं । छह अङ्गन्यास इसके अङ्गभूत हैं । इन न्यासों के पृथक्-पृथक् मन्त्र हैं । इसके बाद नदी ऋषि न्यास मन्त्र का सामान्य उद्धार तत्पश्चात् विशेष उद्धार बतलाया गया है । इसके अनन्तर नदियों के यमुना आदि इक्यावन नामों की चर्चा की गयी है । नदी नाम के बाद मरीचि आदि इक्यावन ऋषियों के नाम गिनाये गये हैं । तत्पश्चात् कामदा आदि इक्यावन देवियों के नाम बतलाये गये हैं ।

इसके अनन्तर नदियों के द्वारा की गयी काली की उपासना की कथा कही गयी है । एक समय की बात है कि कुशिक नामक कल्प में नदियों ने तपस्या की । इस क्रम में उन सबों ने एक हजार वर्षों तक षोडशाक्षर मन्त्र का जप किया । इससे प्रसन्न होकर देवी ने उन नदियों को पाँच वर दिये—१. हम पृथिवी तल पर पवित्र जल वाली हों । २. जब तक हमारा जल रहे तब तक हमारे किनारों पर आप अपने स्वेच्छाकल्पित अनेक नामों से निवास करें । ३. ब्रह्मवादी

ऋषि लोग हमारे तटों पर पर्णकुटी बनाकर तपस्या करें और उनके तप से हम पवित्र रहें । ४. आपकी कृपा से हमारे दो शरीर हों (क) जलमय और (ख) दिव्य । ५. हमारे तटों पर हव्य-कव्य आदि हो और इन किनारों पर देह त्याग करने वाले कभी भी नरक में न जाँय । देवी ने उनके सभी वरों को पूर्ण किया । देवी ने कहा कि जो इस न्यास को करेगा उसके ऊपर मैं प्रसन्न रहूँगी ।

**अस्त्र भैरव न्यास**—चौथा न्यास अस्त्र भैरव न्यास है । इस न्यास के ऋषि प्रजापति, छन्द उत्कृति, देवता अनेक विशेष विशिष्ट गुह्यकाली, बीज खफ्रें, शक्ति क्षह्रीं, कीलक स्हौः और तत्त्व ह्क्ष्म्लैं है । इसका विनियोग त्रिविध पापक्षय सकल शत्रुनाशपूर्वक राज्यप्राप्ति के लिये होता है । इसके पश्चात् इसके षडङ्गन्यास की चर्चा की गयी है । इस भैरव न्यास का सामान्य उद्धार बतलाने के बाद विशेष उद्धार का वर्णन किया गया है । एतदनन्तर ब्रह्मास्त्र आदि इक्यावन अस्त्रों के नाम गिनाये गये हैं । इन नामों के बाद विद्युज्जिह्व आदि इक्यावन राक्षसों के नामों का उल्लेख किया गया है । तत्पश्चात् क्रोध आदि इक्यावन भैरवों के नाम बतलाये गये हैं ।

काली के भैरवी रूप धारण की कथा इस प्रकार है—हिरण्याक्ष ने दिव्य सौ वर्षों तक उग्र तपस्या कर शिव की कृपा से तीन हजार करोड़ वर्ष की आयु वाले हरतार्त्तीयनयन नामक पुत्र को प्राप्त किया । वरदान के कारण शिव इसे मार सकने में असमर्थ थे ।

शिव ने सोचा कि मैं इसे शुभ मार्ग पर ले जाऊँगा । धूम से आकुल आँख वाला होने के कारण हरतार्त्तीयनयन का नाम अन्धकासुर था । वह दैत्य समस्त देवताओं को जीतकर मन्दरगिरि में स्थित पार्वती को अपहृत करने की इच्छा से वहाँ चला गया । वहाँ नन्दी एवं प्रमथगणों के साथ अन्धकासुर का रोमाञ्चक युद्ध हुआ और नन्दी आदि पराजित हो गये । तदनन्तर युद्ध की इच्छा से महादेव स्वयं त्रिशूल लेकर जब वहाँ आयें तो पार्वती वहाँ से भाग गयी । युद्ध में दैत्यों को पराजित कर शिव ने अन्धकासुर को अपने त्रिशूल पर छाता की तरह उठा लिया । तब भी उस दैत्य ने अपनी गदा शिव के शिर पर गिरा दी और शिव के शिर से रक्त की धारा बह चली । रक्तबीज के सदृश शिव के शरीर से जितने रक्त बिन्दु गिरे वे सब के सब शिव की ही वासना वाले भैरव हो गये । अस्थि चर्म मात्र अवशिष्ट अन्धकासुर ने शिव से कहा—मुझे आपने त्रिशूल पर धारण किया अत: आपके ऊपर होने के कारण मैं विजयी हो गया । रुद्र के प्रसन्न होने पर अन्धक ने कहा—हे शिव! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो पर्वती के अपहरणजन्य पाप से मुझे मुक्त कर दीजिये । आप मेरे पिता हैं और वे मेरी माता हैं । जिस प्रकार गणेश और नन्दी आपके प्रिय हैं वैसे ही मैं भी आपका प्रिय

सेवक हो जाऊँ । दैत्येन्द्र के ऐसा कहने पर शिव ने उसे नीचे उतारा तथा मृतसञ्जीवनी मन्त्र से उसके शरीर को फूँककर उसके सारे घावों को ठीक कर दिया तथा उसके वक्ष से त्रिशूल खींच लिया ।

अन्धकासुर को अभीष्ट वर देकर नन्दी के समान उसका नाम भृङ्गी रखा । शिव के शरीर से उत्पन्न समस्त भैरवों के द्वारा भविष्य में अपनी स्थिति के पूछे जाने पर शिव ने कहा—तुम लोग मेरे शरीर से उत्पन्न हो इसलिये मुझमें और तुममें कोई अन्तर नहीं हैं । तुम लोग भी मेरे साथ मन्दराचल पर निवास करोगे । तत्पश्चात् शिव ने पार्वती से कहा—हे प्रिये! ये भैरव मेरे रूप हैं अत: तुम भी नानारूपों में प्रकट होकर इन भैरवों की भैरवी हो जाओ । गुह्यकाली रूप की चर्चा करते हुए महादेव ने कहा कि मैंने इस हिमालयपुत्री को अत्यन्त गुह्य अर्थात् छिपाकर रखा इसलिये आज से यह 'गुह्या' है तथा रूप से काली होने के कारण इसका नाम 'काली' है । इस प्रकार इसका पूरा नाम 'गुह्यकाली' होगा ।

**यज्ञमहाराज न्यास**—इस न्यास के ऋषि शैलूष, छन्द विकृति, देवता गुह्यकाली, बीज क्लीं, शक्ति ह्रीं, कीलक फ्रें और तत्त्व स्त्रीं है । इसका प्रयोग आयु आरोग्य सुख ऐश्वर्य और शत्रुरहित राज्यलाभ के लिये होता है । इसके षडङ्गन्यास अङ्गुष्ठ आदि तथा हृदय आदि दोनों प्रकार के होते हैं । आगे चलकर इसके सामान्य और विशेष दोनों प्रकार के उद्धार बतलाये गये हैं । इसके बाद इस न्यास की उत्पत्ति की कथा कही गयी है, जो संक्षेप में इस प्रकार है—कल्प के प्रारम्भ में ब्रह्मा ने सृष्टि रचना कर समस्त सारतत्त्व को ब्राह्मणों को दे दिया । इन सार तत्त्वों को प्राप्त करने के बाद ब्राह्मणों ने तपश्चर्या में अपने मन लगाये । फलत: अपालनकृत दोषों के कारण पृथिवी अस्त-व्यस्त, चोर-डाकुओं एवं हिंस्र जन्तुओं से व्याप्त एवं बाधित हो गयी । ऐसी स्थिति में प्रजा भागकर ब्राह्मणों की शरण में गयी । ब्राह्मण लोग प्रजा को साथ लेकर ब्रह्मा के पास गये और बोले—ब्रह्मन्! हम लोग प्रजापालन में असमर्थ है ।

अत: हमारे बाद उत्पन्न क्षत्रियों को पृथ्वी के पालन का उत्तरदायित्व सौंप दीजिये । ब्रह्मा ने वैसा ही किया और पृथिवी बाधामुक्त हो गयी । तत्पश्चात् क्षत्रिय लोग वेदमार्गानुसारी होकर यज्ञ के लिये दीक्षित हो गये ।

महर्षियों ने इन क्षत्रियों के यज्ञ सम्पन्न कराये । यज्ञ के क्रम में ऋषियों ने देवताओं का आवाहन किया । तीनों अग्नियों को घृतधारा से तृप्त करने के बाद भी देवता लोग शरीर धारण कर यज्ञ में नहीं आये । इसके अनन्तर महर्षियों ने दो-तीन बार मन्त्रों का जपकर देवताओं का आवाहन किया फिर भी वे नहीं आये । परिणामस्वरूप लज्जा के कारण महर्षिगण मृतकल्प हो गये । इसके बाद उन ऋषियों ने महादेवी को देवताओं के पास उनके न आने का कारण जानने के

लिये भेजा । पूछने पर देवताओं ने कहा कि हम पराधीन हैं । हम काली के सिंहासन को ढोने वाले हैं । यज्ञ भी उनके आसन हैं अत: जब तक देवी काली का आवाहन यज्ञ में नहीं होगा, ब्रह्मा विष्णु भी यज्ञ में नहीं आ सकते ।

ऋषियों के वचन को सुनकर राजाओं ने गुह्यकाली के उत्तम मन्त्र को लेकर उसी यज्ञ में तीन वर्षों तक काली की आराधना की । परिणामस्वरूप काली अपना स्वरूप छोड़कर शुक्लवस्त्रावृत लक्ष्मी के रूप में वहाँ आयी । उसके आसन को ढोते हुए ब्रह्मा आदि देवगण भी वहाँ सशरीर उपस्थित हुये । देवी के आने पर पुन: वहाँ यज्ञों का प्रारम्भ हुआ । प्रत्येक यज्ञ में काली सन्निहित रही तथा देवताओं के साथ यज्ञभाग का ग्रहण किया । तत्पश्चात् प्रसन्न हो देवी ने भृगु वसिष्ठ आदि ऋषियों से कहा—हे ऋषिगण! जिस-जिस राजा ने जिस-जिस यज्ञ के अन्त में 'लक्ष्मी' पद वाले जिस-जिस नाम से जिस-जिस वर के लिये प्रार्थना की है आप लोग उन सबको मन्त्ररूप से सन्दिष्ट कर न्यास बनाइये । तत्पश्चात् ऋषियों ने पहले यज्ञ का फिर तत्तद् राजा का नाम और अन्त में तत्तत् नामाङ्क 'लक्ष्मी' कहा । इस प्रकार यज्ञ महाराज न्यास की रचना हुई ।

**कल्पसिद्ध न्यास**—कल्पसिद्ध न्यास के ऋषि हरिद्रुमत गौतम, छन्द उष्णिक्, देवता गुह्यकाली, बीज हसफ्रौं, शक्ति ग्लूं, कीलक खं खं खं, तत्त्व ह्स्ख्फ्रें हैं । इसका विनियोग कल्पसिद्ध न्यास के लिये होता है । इसके षडङ्गन्यास के सन्दर्भ में ब्रह्मा, वसिष्ठ के द्वारा उपासित काली मन्त्र, षोडशाक्षरी विद्या, हिरण्यकशिपु तथा राम के द्वारा उपासित विद्या के मन्त्रों के द्वारा न्यास किया जाता है । न्यास के वर्णन के बाद इसके सामान्य तथा विशेष उद्धार बतलाये गये हैं ।

उद्धार के वर्णन के बाद इसके माहात्म्य तथा उद्‌भव की चर्चा की गयी है—जब ब्रह्मा के श्वेत वाराह कल्प नामक दिन का प्रारम्भ हुआ तब समस्त कालियों में गुह्यकाली मुख्य हो गयी । श्वेतवाराह के पूर्व कल्पों में जो लोग सामान्य पुरुष थे वे लोग रोग शोक आदि से पीड़ित थे । चारो वर्णों में से कुछ भाग्यवानों ने तत्तत् मन्त्र के उच्चारण के द्वारा काली की उपासना की । उस उपासना तथा काली की कृपा से वे मानवौघ तथा दिव्यौघ की श्रेणी में आ गये । गुह्यकाली की प्रसन्नता के कारण उन गुरुओं का नाम परिवर्तन किया गया । यह परिवर्तन उन सिद्धों की इच्छा के अनुसार हुआ इन सिद्धों ने भैरवागमों में स्थित मन्त्रों को प्रकट किया ।

श्वेतवाराह कल्प में जब गुह्यकाली ने महाभयङ्कर उल्बणरूप धारण किया तो अन्य कालियाँ अपने-अपने मन्त्रों के साथ लुप्त हो गयीं । इस घटना से दु:खी होकर गुह्यकाली ने त्रिपुरारि से कहा कि—हे प्रभो! मेरा उद्धार कीजिये और इसके

लिये उन-उन कल्पों के नामों से युक्त उन-उन कालियों एवं सिद्धों के नाम तथा 'सिद्धविहित' शब्द से अन्वित कोई न्यास बनाइये जिससे इनका लोप न हो तथा कल्पसिद्धन्यास बन जाय । काली के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर भगवान् शिव ने वैसा ही किया और इस प्रकार प्रस्तुत न्यास की उत्पत्ति हुई ।

आगे चलकर यह बतलाया गया कि न्यासों का अनुष्ठान पूरा करने के बाद बलि देनी चाहिये । बलिदान के मन्त्रों का भी उद्धार बतलाया गया । शैव लोग प्रथम न्यास को मातृकायुक्त कहते हैं । कापालिक लोग पाँच अन्य न्यासों को मातृका से युक्त कर कहते हैं । मौलेयों का विचार है कि सब न्यासों के आदि में मातृका का कथन करना चाहिये । नि:पठ लोग मातृकायोग नहीं करते । भाण्डिकेर एवं अन्य लोग शाक्तमतानुयायी हैं । बलि के पश्चात् कौलिक लोग शक्तिपूजा करते हैं । वाममार्गी लोग रतिक्रिया करते हैं, वेदमार्गानुयायी कुछ नहीं करते ।

अन्त में न्यास के उपदेशग्रहण और अनुष्ठानविधि की चर्चा की गयी है । शिष्य का कर्तव्य है कि वह गुरु से उपदेश लेकर चतुर्दशी अथवा अष्टमी को इसका प्रारम्भ करे । यदि प्रत्येक उक्त तिथियों में करने में साधक अक्षम हो तो शारदीय नवरात्र में इसका प्रयोग अवश्य करना चाहिये । यदि यह भी न हो सके तो इस न्यास को भोजपत्र पर लिखकर इसे भुजा में धारण करे तथा यन्त्रपीठ की भाँति इसकी नित्य पूजा करे । ऐसा करने वाले के घर में रोग शोक आपदायें भूतप्रेत नहीं आते । आयुष्य राजसम्मान शुभकार्य की वृद्धि होती है ।

।। श्रीः ।।

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला

४०३

# महाकालसंहिता

## (गुह्यकालीखण्डः)

[ तृतीयो भागः * १०-११ पटलात्मकः ]

ज्ञानवतीहिन्दीभाष्येण विभूषिता

व्याख्याकारः सम्पादकश्च

**आचार्य राधेश्याम चतुर्वेदी**

व्याकरणाचार्यः एम.ए.(संस्कृत), पीएच.डी., लब्धस्वर्णपदकः
शास्त्रचूडामणिविद्वान्
इमेरिटस प्रोफेसर एवं अध्यक्षः, संस्कृत विभागः
देवसंस्कृतिविश्वविद्यालयः, गायत्रीकुञ्जशान्तिकुञ्जः, हरिद्वार
(पूर्वाचार्यः) संस्कृतविभागः, कलासंकायः
काशीहिन्दूविश्वविद्यालयः, वाराणसी

**चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन**

वाराणसी

# पुरोवाक्

जगत्प्रसविनी वेदमाता गायत्री के कृपाप्रसाद के रूप में महाकालसंहिता गुह्यकाली खण्ड के तृतीय भाग का सटीक संस्करण विद्वन्मण्डल के समक्ष प्रस्तुत करते हुए अपार आनन्द का अनुभव हो रहा है । महाकालसंहिता भगवती काली की वाममार्गी साधना-आराधना-उपासना का महत्त्वपूर्ण अथवा यह कहिये कि सर्वोत्तम ग्रन्थ है । अनेक ऋषियों तपस्वियों यहाँ तक कि असुरों के भी द्वारा अनुष्ठित मन्त्र के स्वरूप, उनके सामान्य विशेष उद्धार तथा न्यास एवं उनके उभयविध उद्धार का इतना वैज्ञानिक निरूपण अन्यत्र नहीं मिलता । इसका एक मात्र उद्देश्य है मन्त्रों के स्वरूप-निर्धारण में एक मात्रा का भी स्खलन न हो । लघुषोढा आदि प्रायः अष्टादश न्यासों का वृहत् निर्वचन उनके अनुष्ठाता को सिद्धिप्रदान करने में रञ्चमात्र भी सन्देहास्पद स्थिति में नहीं रखता । गुह्यकाली खण्ड के पूर्व के दो भागों में उक्त समस्त विषयों का निरूपण हो चुका है ।

प्रस्तुत तृतीय भाग गुह्यकाली खण्ड के दशम एवं एकादश पटलों को अपनी परिधि में आत्मसात् किये हुए है । दशम पटल का अवतरण गुह्यकाली की पूजाविधि से होता है । यह पूजा वाममार्गी है । इसमें शङ्खस्थापन की साङ्गोपाङ्ग विधि, पञ्चपात्र-श्रीपात्र की स्थापना-पूजा, कुलकुम्भपूजा, शक्तिपात्र-स्थापनपूजन, यन्त्र-स्थापन-पूजन की चर्चा के मध्य शववस्त्र, अनङ्गगन्ध, स्वयम्भूपुष्प, रतिपुष्प आदि के दान इत्यादि का वामविधिसम्मत सविस्तार निरूपण किया गया है । काली की राजोपचार पूजा के सन्दर्भ में माला के प्रकार, नैवेद्य के भेद का वर्णन करने के बाद छत्र चामर शय्या शिविका वितान आदि के अर्पण की चर्चा की गयी है । दशवक्त्रा गुह्यकाली एवं नृसिंह की पूजा का अवतार-कथा के सहित विवरण प्रस्तुत है । काली यन्त्रस्थ आवरणपूजा, शक्ति प्रकार-पूजा के प्रक्रम में मतमतान्तरों का वर्णन ग्रन्थ की कल्पना में सुवर्ण सौरभ की भूमिका का निर्वहण करता है । अन्त में सहस्रनामस्तोत्र का वर्णन है ।

एकादश पटल का उपक्रम बलिद्रव्य के वर्णन से होता है । आत्माभिषेक, वीरपात्र, गुरुपंक्तिपूजा, शावरोत्सव, भोजननियम, सायंकृत्य, महानिशापूजा, योग तथा उनके प्रकार, सृष्टिप्रक्रिया, शरीरविज्ञान, प्राणायाम आदि अष्टाङ्गवर्णन, हठयोग इत्यादि का वर्णन कर अन्त में मृत्यु-विजय एवं काल का विवरण प्रस्तुत कर पटल का उपसंहार किया गया है ।

# गुह्यकालीखण्ड—३

(१०-११ पटल)

## संक्षिप्त परिचय

**दशम पटल**—इस पटल में सर्वप्रथम गुह्यकाली एवं उसके आवरण अङ्गों की पूजा का वर्णन किया गया है । उसके बाद शक्तिपूजा, माला का स्वरूप एवं प्रकार, जप और उसके प्रकार, स्तोत्र एवं कवच का विवरण है ।

नित्य-नैमित्तिक एवं काम्य भेद से पूजा तीन प्रकार की होती है । इस क्रम में सर्वप्रथम करकच्छपिका, त्रिखण्डा, योनि एवं अञ्जलि मुद्रा दिखाकर उनमें भगवती के प्रत्येक अङ्ग की भावना करने के पश्चात् अपने को देवीरूप में भावना करते हुए देवी की मानसपूजा करनी चाहिये । बाह्यपूजा के क्रम में सबसे पहले शङ्ख-पात्र की स्थापना का विधान है । इसके लिये भूमि पर त्रिकोण बनाकर उस पर देवी की दाँयीं ओर शङ्ख को रखना चाहिये । मन्त्रपाठपूर्वक शङ्ख में जल डालकर उसके पश्चात् उसमें तीर्थों का आवाहन करना चाहिये । शङ्खस्थ जल का अमृतीकरण अवगुण्ठन सकलीकरण करने के बाद प्रोक्षणीपात्रस्थ जल से अपना और पूजा-सामग्री का अभिषेक करना चाहिये । शङ्खरूपी अर्घपात्र के उत्तर पाद्य एवं आचमनीय पात्रों को रखना चाहिये । पञ्चायतन पूजा के क्रम में गणेश विष्णु सूर्य शिव एवं दुर्गा (काली) की स्थापना करने का विधान वर्णित है ॥ १-३९ ॥

यज्ञस्थल में उत्तर दिशा में गुरु परमगुरु और परमेष्ठीगुरु की स्थापना करने के बाद श्रीपात्रस्थापना का वर्णन है । इस क्रम में त्रिपादिका का प्रक्षालन कर चारो दिशाओं में त्रिपादिका की पूजा कर श्रीपात्र को उस पर रखकर उसका बाह्य पूजन करना चाहिये । इसके पश्चात् कुलकुम्भ की पूजा कर उसमें स्थित मद्य से श्रीपात्र को पूरित करना चाहिये । कुलद्रव्य अर्थात् मद्य का पूजन करने के बाद श्रीपात्र स्थित द्रव्य का पूजन करना चाहिये । श्रीपात्र का दिग्बन्धन कर कुलद्रव्य के मध्य आनन्दभैरव का ध्यान करना चाहिये । सुधादेवी का ध्यान कर पञ्चरत्नों का पूजन कर श्रीपात्र का संस्कार कर शक्तिपात्र को देवी के बाँयें स्थापित करना चाहिये ॥ ४०-१२४ ॥

शङ्खपात्र के अतिरिक्त अन्य चार पात्रों की स्थापना करनी चाहिये । वे हैं— गुरुपात्र, भोगपात्र, वीरपात्र और कुलपात्र । इन पात्रों में तत्तद् व्यक्ति का आवाहन करना चाहिये । श्रीपात्रस्थ द्रव्य के प्रयोग के विषय में दो मतों का वर्णन किया गया है । चार शक्तिपात्र आदि के उत्सर्ग का वर्णन करने के बाद पूजा की विधि

बतलायी गयी है । इस क्रम में सबसे पहले प्राणायाम फिर षडङ्गन्यास, मुद्राबन्ध ध्यान के बाद यन्त्र की स्थापना का वर्णन है । इसके लिये यन्त्र की प्राणप्रतिष्ठा, कुसुमाञ्जलि दान, आवाहन, स्थापन, सन्निधापन, निरोधन आदि प्राय: तेरह क्रियाओं एवं उनके मन्त्रों का वर्णन है । इसके बाद उपकरणों का अभ्युक्षण तथा आसन पाद्य आदि के प्रदान द्वारा देवी गुह्यकाली की पूजा का वर्णन किया गया है । इस क्रम में शववस्त्र, अनङ्गगन्ध, स्वयम्भूपुष्प, रतिपुष्प आदि के भी द्वारा पूजा का वर्णन है । दीपित, फाणित, पारित, विश्र और मिश्र—पाँच प्रकार के नैवेद्य के पश्चात् छत्र चामर शिविका शय्या वितान आदि राजोपचारों के अर्पण एवं अर्पण के महत्त्व की चर्चा की गयी है । इस सन्दर्भ में उपस्करण के नाम गिनाये गये हैं । वे हैं—कंघी, वाद्ययन्त्र, गन्ध, कज्जल, सिन्दूर आदि के पात्र; देवालय, नगर, भूमि, हाथी, घोड़ा आदि, दास-दासी, स्वर्ण आदि के बृहत्पात्र; अस्त्र-शस्त्र तथा अन्य शोभादायक वस्तुयें । इस क्रम में आरती की भी चर्चा है । एक पात्र में बहुत-सी दीपबत्तियाँ इस प्रकार रखी जाँय कि उससे वृक्ष, लता, गोल आदि आकार बनें तो उसे आरती कहते हैं ॥ १२५-६०५ ॥

इसके अनन्तर दशमुखी गुह्यकाली के वक्त्रों, अस्त्रों के मतभेद सहित उनकी पूजा को बतलाने के बाद गुह्यकाली के अङ्गप्रत्यङ्ग रूप आवरणों की अर्चना की चर्चा की गयी है । इस उपक्रम में नृसिंह की पूजा के सन्दर्भ में महेश्वर के नृसिंह रूप धारण, उनकी पूजा का मन्त्र, ध्यान, षडङ्गन्यास, बलिद्रव्य, अर्पण मन्त्र का वर्णन करने के बाद देवी के सौम्य उग्र तथा उग्रतर रूपों की चर्चा करने के बाद सृष्टि एवं संहार दोनों क्रमों से पूजन का कथन किया गया है । हृदय विद्या, समय विद्या के विषय में अपना मत प्रदर्शन के पश्चात् आवरण-पूजा के ऋषि आदि की चर्चा कर पीठ के मध्य में समस्त देवताओं की पूजा-सम्बन्धी मन्त्र का निर्देश किया गया है । महाघोर कालदण्ड आदि आठ श्मशानों के पूजामन्त्रों का वर्णन करने के पश्चात् उनका दिग्विभाग बतलाया गया है ॥ ६०६-८५८ ॥

अष्ट द्वारपालों के पूजा मन्त्रों के बाद उनकी तथा आठ त्रिशूलों की सामान्य एवं विशेष पूजा का वर्णन किया गया है । वज्र की पूजा के बाद चार वेताल की अभ्यर्चना का वर्णन कर सिंहासन और सिंहासनधारियों की पूजा बतलायी गयी है । दश दिक्पाल ही सिंहासनधारी हैं । इनकी पूजा के साथ-साथ इनके स्वरूप तथा वाहनों की भी चर्चा है । पञ्च महाप्रेतों के अर्चामन्त्र की चर्चा कर शिवासन के पूजा-मन्त्र का उल्लेख विहित है । इनका आसन चौबीस दलों वाला कमल है । इन दलों में चौबीस कालियों की पूजा की चर्चा की गयी है । इस क्रम में चौबीस कालियों के नाम भी गिनाये गये हैं । इनके पश्चात् षोडशदल कमल पर स्थित देवी की पूजा का विधान वर्णित है । इसके अनन्तर महिम्नी आवरणार्चा को उल्लिखित किया गया है । आगे चलकर कापालिक मत के अनुसार षोडशदल पर देवी की

पूजा का विधान बतलाया गया है । इसके पश्चात् द्वादशदल कमल पर देवीपूजा के विधान को बतलाकर यह कहा गया कि इसके अनेक भेद हैं । सब भेदों में उत्कृष्ट होने के कारण यहाँ त्रिपुरारिउक्त मत का वर्णन कर बाद में कापालिक एवं दिगम्बर मतों की भी चर्चा की गयी है । इसके पश्चात् अष्टपत्राम्बुज पर देवीपूजा के वर्णन-क्रम में श्रेष्ठतम होने के कारण पहले त्रिपुरघ्न का मत तीन भेदों में वर्णित किया गया हैं । इसी सन्दर्भ में कापालिक एवं दिगम्बर मतों की भी चर्चा की गयी है ॥ ८५९-१०२० ॥

अष्टदल कमलस्थ देवी के पूजन प्रकारों का वर्णन कर उस पर स्थित आठ रेखाओं, जिन्हें पंक्ति कहा जाता है, में अभ्यर्हणीय देवों की चर्चा है । एक-एक पंक्ति में बत्तीस-बत्तीस देवताओं की पूजा का विधान है । इस प्रकार आठ पंक्तियों में तत्तद् देवताओं की अर्चा का उल्लेख है । इन देवताओं में क्रमशः सिद्धा, भैरव, भैरवी, डाकिनी, शक्ति, योगिनी, चामुण्डा और महालक्ष्मी आदि देवियों की पूजा का वर्णन है । इस क्रम में उनके मन्त्र, नाम तथा ध्यान की पृथक्-पृथक् एवं विस्तृत चर्चा की गयी है । यह त्रिपुरघ्न का मत है । इससे भिन्न कापालिक एवं दिगम्बर मतों में नवीं पंक्ति का भी उल्लेख मिलता है; जिसमें गौरी, पद्मा आदि सोलह माताओं का पूजन करना बतलाया गया है ॥ १०२१-११७८ ॥

अष्टार के बाहर स्थित गोलमण्डल में काली की पूजा करनी चाहिए । यहाँ इसके मन्त्र को भी उल्लिखित किया गया है । इसके पश्चात् ओड्डियान आदि चार पीठों का वर्णन कर अष्टार के मध्य में स्थित वासुकि आदि आठ नागों की पूजा-विधि बतलायी गयी है । इस क्रम में उनके रङ्ग, आभूषण आदि का भी वर्णन है। कापालिकों एवं दिगम्बरों के मत में नाग शब्द के हाथी का वाचक होने से ऐरावत आदि आठ हाथियों की पूजा कही गयी है ॥ ११७९-१२०९ ॥

दूसरे आवरण में आठ मुद्राओं के अर्चन का अभिधान है । यहाँ उनके नाम भी बतलाये गये हैं । तदनन्तर तृतीय आवरण में क्षेत्रपालों की पूजा-विधि का उल्लेख है । इस क्रम में उनके नाम एवं विनियोज्य मन्त्रों को भी बतलाया गया है। तत्पश्चात् चतुर्थ आवरण में आठ गणेश्वरों के पूजन की चर्चा की गयी है । कापालिक यामलीय एवं डामरमत के अनुयायी दो अतिरिक्त आवरणों की चर्चा करते हैं । उनके अनुसार पञ्चम एवं षष्ठ आवरणों में क्रमशः सुमेरु आदि आठ पर्वतों एवं गङ्गा आदि आठ नदियों की पूजा करने का विधान है । इसके पश्चात् अष्टार के ऊपर स्थित गोल मण्डल में रहने वाले देवताओं की पूजा-विधि बतलायी गयी है । तदनन्तर नारद गौतम आदि आठ सिद्ध ऋषियों की पूजा करने को कहा गया है । देवता और ऋषि दोनों के अर्चन में विनियोज्य मन्त्रों का उद्धार भी बतलाया गया है ॥ १२०२-१२५० ॥

आगे चलकर देवी ने कापालिक आदि सम्प्रदायों का परिचय पूछा जिसके उत्तर में महाकाल ने कहा कि जो साधक कपालडामरोक्त नियमों का पालन करते हैं वे कापालिक तथा भैरवसंहिता के अनुसार जीवन-यापन करनेवाले दिगम्बर कहे जाते हैं। इसी प्रकार यामल के सिद्धान्तों का पालन करनेवाले मौलेय के नाम से प्रसिद्ध है। इनमें मौलेय और भाण्डिकेर ग्रहणीय हैं। नव कोणों में ब्रह्माणी आदि नव देवियों की प्रथमावृत्ति में तथा नवग्रहों की द्वितीयावृत्ति में पूजा किये जाने का विधान है। तदनन्तर देहस्थ नव चक्रों की पूजा के बाद पञ्चार पूजा का वर्णन किया गया है। यहाँ एक कोण में सत्ताईस पूजा के नियम से पाँच कोणों में एक सौ पैंतीस पूजा होती है। इस सन्दर्भ में उस पूजा के मन्त्रों के सामान्य एवं विशेष उद्धारों को दर्शाया गया है ॥ १२५१-१३६३ ॥

इसके अनन्तर तृतीयार एवं चतुर्थार पूजा का वर्णन है। तृतीयार में शवासिनी आदि कालियों की एवं चतुर्थ में दिव्यौघ गुरुओं की पूजा होती है। अनाख्यापूर्ण होम अर्थात् पूर्णाहुति का वर्णन करने के बाद भासा की पूर्णाहुति का वर्णन है। इसके अनन्तर पञ्चारपूजा के सन्दर्भ में कापालिक दिगम्बर मौलेय एवं भाण्डिकेर मतों के अनुसार पञ्चार पूजा की चर्चा की गयी है। त्र्यार पूजा के सन्दर्भ में गुण, देव, अग्नि आदि आठ वस्तुओं के तीन-तीन होने के कारण चौबीस प्रकार की पूजा में एक-एक अर की पूजा का मन्त्र के साथ वर्णन किया गया है। बिन्दुपूजा वर्णन के क्रम में कापालिक, दिगम्बर, मौलेय एवं भाण्डिकेर सम्प्रदायों के द्वारा अपनायी जानेवाली भिन्न-भिन्न विधियों का वर्णन किया गया है। इन सम्प्रदायों के मन्त्र एवं पद सब भिन्न-भिन्न होते हैं। महाकाल मत का वर्णन करते हुए बिन्दु पदार्थ का विश्लेषण, बिन्दु की पूजा का मन्त्र और अन्त में सर्वसम्मत बिन्दुपूजा का वर्णन किया गया है। इसमें ब्रह्मा से लेकर किन्नर तक प्रायः उन्नीस आराधकों के बिन्दुपूजा-क्रम की चर्चा की गयी है ॥ १३६४-१५६६ ॥

बिन्दुपूजा समाप्तिकारक मन्त्र का वर्णन करने के बाद देवी की आवरण-पूजा का परिचय बतलाते हुए कहा गया है कि बिन्दु से लेकर नृसिंह पूजा तक के बीच जो भी देवता आदि हैं उनकी पूजा देवी के आवरण की पूजा कही जाती है। पात्र-ग्रहण के विषय में मतभेदों को बतलाते हुए देवीपात्र के समर्पण का मन्त्र, शक्तिपात्र-गुरुपात्र-भोगपात्र-वीरपात्र एवं षष्ठपात्र के समर्पण के मन्त्रों की स्वरूप-चर्चा के बाद बलिदान-विधि का वर्णन किया गया है। गणपति, बटुक, क्षेत्रपाल, मातृगण, योगिनी, डाकिनी और स्थान देवता की बलि-वर्णन के क्रम में बलि के प्रोक्षण एवं उत्सर्ग के मन्त्रों का वर्णन कर गणेश आदि प्रत्येक देवता के पृथक्-पृथक् बलि उत्सर्ग मन्त्रों का उद्धार विस्तार के साथ बतलाया गया है। इसके अनन्तर शक्ति पूजा का विवरण प्रारम्भ होता है ॥ १५६७-१६५५ ॥

इस क्रम में यह बतलाया गया कि शैव स्मार्त्त और याज्ञिक लोग शक्तिपूजा नहीं करते। स्त्रियों के विषय में जिनकी अविचल देवीबुद्धि होती है वे ही कौल, कालीभक्त, तान्त्रिक लोग शक्तिपूजा के अधिकारी होते हैं। शक्ति को स्वकीया परकीया भेद से दो प्रकार का बतलाया गया है। स्वकीया की अपेक्षा परकीया अधिक उत्तम मानी जाती है। स्त्री साधिका के विषय में भी यही नियम ग्राह्य होता है। इसके अनन्तर स्मार्तों के लिए प्रशस्य और निन्द्य शक्ति की चर्चा की गयी है। निषिद्ध और उत्तम शक्तियों का वर्णन करते हुए कहा गया कि अङ्गहीन, अधिकाङ्गी और पति से डरनेवाली इत्यादि शक्ति ग्राह्य नहीं होती। सुन्दर, सुरूप और सर्वाङ्गपूर्ण शक्ति ही ग्राह्य होती है। शक्तिपूजा के प्रसङ्ग में कापालिक आदि तान्त्रिक मत का परिचय देकर शक्तिपूजा का विधान बतलाया गया है। इस क्रम में शक्तिपूजा के ऋषि आदि का वर्णन कर शक्तिन्यास का उल्लेख विहित है। न्यास करने के बाद शक्ति का शोधन करने का विधान है ॥ १६५६-१७३८ ॥

शक्ति के अङ्गों में अञ्जलिमुद्रा के द्वारा मन्त्रोच्चारपूर्वक शक्ति का आवाहन करने के बाद शक्तिपूजा का विधान वर्णित है। इसमें मौलेय लोगों से अपना मतभेद वर्णित करने के बाद शक्ति गायत्री का वर्णन किया गया है—(क्लीं भगवत्यै विद्महे, योनिमालिन्यै धीमहि तन्नः शक्तिः प्रचोदयात्)। जपमाला के प्रकार को बतलाते हुए तत्तद् उद्देश्य के लिये तथा तत्तद् देवता-भेद के अनुसार भिन्न-भिन्न माला का प्रकार बतलाकर स्फटिकमाला को सर्वोत्तम बतलाया गया। माला-शोधन की दो विधियों को बतलाकर उसका संस्कार, जप का प्रकार, जपसमर्पण का मन्त्र एवं सिद्धिस्तोत्र का वर्णन किया गया है। इस स्तोत्र की फलश्रुति के बाद एक सौ छत्तीस श्लोकों में गुह्यकाली सहस्रनाम का उल्लेख हुआ है ॥ १७३९-२०१६ ॥

सहस्रनामस्तोत्र की फलश्रुति का उल्लेख कर उक्त स्तोत्र की प्रयोगविधि का वर्णन करने के साथ यह भी बतलाया गया कि उक्त स्तोत्र को पढ़ने में असमर्थ पाठक 'चण्डयोगेश्वरी......यथेच्छसि तथा कुरु ॥' का पाठ करे। पद्यात्मक स्तोत्र के अनन्तर महाकाल ने देवी को गुह्यकाली का गद्यात्मक स्तोत्र भी सुनाया। यह गद्य-स्तोत्र पूर्वोक्त पद्यात्मक स्तोत्र का प्राण है। स्तोत्र-वर्णन के बाद विश्वमङ्गलकवच का महत्त्व बतलाने के बाद कवच का वर्णन कर यह बतलाया गया कि इस कवच को धारण करनेवाले साधक को किसी प्रकार का भय नहीं रहता। वह निर्भय होकर कहीं भी जा सकता है और अप्रत्याशित लाभ प्राप्त करता है ॥ २०१७-२१२७ ॥

**एकादश पटल**—इस पटल का विषय निम्नलिखित है—कवच, स्तोत्र के पाठ के बाद स्मृति-ग्रन्थों के अनुसार बलि एवं वैश्वदेव करना चाहिये। इसके बाद विभिन्न आश्रमवासियों के लिये भिन्न-भिन्न द्रव्यों की बलि का वर्णन किया गया है, जिसमें कौलमार्ग के अनुयायी मद्याक्त मांस एवं मधुलिप्त मत्स्य की बलि दें।

इनके अभाव में गुड़ों की ढेली देने का विधान है । बलिमन्त्र का उद्धार बतलाने के बाद 'वैश्वदेव' शब्द की व्याख्या बतलायी है । आगे चलकर मण्डलों के प्रकार बतलाये गये हैं कि वे चक्राकार एवं गोल होते हैं । बलिदान की विधि के साथ उसके उत्सर्ग का मन्त्रोद्धार पैंतीस श्लोकों के माध्यम से बतलाकर फिर श्लोकबद्ध मन्त्रों का उल्लेख किया गया है। इसके अनन्तर आत्माभिषेक, वैश्वदेव की आवश्यकता बतलायी गयी है ॥ १-८६ ॥

पात्रतर्पण के निर्वचन क्रम में तान्त्रिक मतभेद, पात्रतर्पण का आधार, इस आधार के विषय में अपना मत बतलाते हुए कहा गया कि त्रिपुरघ्न के द्वारा बताये गये इस आधार में कोई दोष नहीं है । आगे चलकर तार्पणीमुद्रा, तर्पण मन्त्र एवं कुलपात्र के तर्पण की विधि बतलायी गयी हैं । कुलपात्र से ही गुरुपंक्ति का अर्पण करने को कहा गया है । गुरु, परमगुरु, परमेष्ठीगुरु, परापरगुरु परापरपरम गुरु का तर्पणकर शक्तिपात्र से शक्तियों का तर्पण करना चाहिये । इनके तर्पण का मन्त्रोद्धार भी निर्दिष्ट है । तर्पण के मन्त्रों की संख्या पन्द्रह बतलायी गयी है । मूलपात्र के तर्पण की समन्त्रक विधि बतलाकर अन्य मतों के उल्लेख के बाद अपने मत की चर्चा कर पात्र-संस्कार की समन्त्रक विधि बतलायी गयी है । कापालिक के द्वारा प्रयोज्य अन्य मन्त्र का निर्देश कर नैवेद्य के विषय में चर्चा की गयी है । इसके बाद अड़तीस श्लोकों में शान्तिपाठ बतलाया गया है ॥ ८७-२२२ ॥

शाबर उत्सव के विषय में कहा गया कि यह जगदम्बा के आनन्द को बढ़ाता है । इसी समय भाण्डिकेरों के द्वारा अनुष्ठीयमान कुम्भ सम्भार की भी चर्चा की गयी है । भोजनकालिक कर्त्तव्य के सन्दर्भ में कहा गया कि पूर्वाभिमुख होकर भोजन करनेवाला आयुष्ट्व को प्राप्त करता है । दक्षिण पश्चिम उत्तर दिशाओं की ओर मुंह कर भोजन करने वाला क्रमशः यश, लक्ष्मी एवं सिद्धि-मुक्ति लाभ करता है। भोजन के पूर्वकरणीय कृत्यों का वर्णन कर मन्त्र-उच्चारणपूर्वक भोजन करने का विधान है। इन उच्चारणीय मन्त्रों की संख्या बारह है । इनका उद्धार भी बतलाया गया है। भोजन के विषय में नियम हैं कि आधा पेट करना चाहिये । एक चौथाई जल तथा एक चौथाई वायु के लिये पेट में स्थान रिक्त रखना चाहिये । तत्पश्चात् भोजनोत्तर कृत्य का वर्णन किया गया है ॥ २२३-३४९ ॥

सायङ्कालीन कृत्य के सन्दर्भ में कहा गया कि साधक मध्याह्न काल के समान सायं सन्ध्या का वन्दन करे । इस क्रम में दो प्रार्थना श्लोकों का पाठ करने के बाद षोडशोपचार पूजन करना चाहिये । पीठपूजा में मन्त्रों का उद्धार बताते हुए योगिनी डाकिनी आदि की पूजा को पीठ के नीचे करने की चर्चा की गयी है । फिर पीठ के गणों की चौबीस, षोडश, अष्टदलों पर अर्चना करने का विधान है । साथ ही कराली आदि साठ देवियों की पूजा को भी करना चाहिये । इसी प्रकार षोडश,

द्वादश, अष्टदलों में महारात्रि, कालरात्रि आदि छत्तीस देवियों की पूजा करने को कहा गया है । इसी क्रम में वृत्त, नवकोण, पञ्चार, त्रिकोण में भी क्रमशः राज-राजेश्वरी आदि, सृष्टिकाली आदि, कपिवक्त्र आदि की अधिष्ठात्री का पूजनकर बिन्दु में चिदात्मिका कैवल्यात्मिका का पूजन करना चाहिये ॥ ३५०-४१४ ॥

कुछ तान्त्रिक लोग महानिशा पूजा भी करते हैं । उन पूज्य देव-देवियों के नामों का उल्लेख कर यह कहा गया कि उनकी पूजा कर बलि देने के बाद कपूर की आरती और सुगन्धित मद्य का अर्पण करना चाहिये । मूलमन्त्र का जप, प्रार्थना, गीत, वाद्य आदि करने के बाद शयन करना चाहिये । शयनावस्था में दिखायी देने वाले दुःस्वप्न के प्रभाव को दूर करने के लिये अठारह श्लोकों के पाठ की भी चर्चा हैं ॥ ४१५-४४६ ॥

देवी ने महाकाल से योगियों के द्वारा अर्धरात्रि में की जानेवाली योगविधि के विषय में प्रश्न किया । उत्तर में महाकाल ने कहा कि इसे मैंने गौतम ऋषि को बतलाया था । जो कैवल्य चाहनेवाले ब्रह्मर्षि तपोनिष्ठ ब्रह्मा के मानसपुत्र हैं, वे भी योगसाधना करते हैं । महाकाल ने इस प्रसङ्ग में कहा कि सूक्ष्म अथवा लिङ्गशरीर की सृष्टि अविद्या के द्वारा रचित होती है । चार प्रकार के स्थूल शरीर की चर्चा करते हुए कहा गया कि मनुष्य देह ही योगोपयोगी होता है । इसके पश्चात् इस पटल में गर्भ-प्रक्रिया का वर्णन पैंतालिस श्लोकों में किया गया है । आगे चलकर शरीरविज्ञान के प्रक्रम में उसकी रचना, अङ्गावयव, गुण, प्राण आदि पञ्चवायु, नाग आदि वायु, सात सन्धिकाय, सात्त्विक राजस तामस देह, मूत्र आदि के सात आशय, जाग्रत् आदि अवस्थायें, मूलाधार आदि षट्चक्र, उनमें वर्तमान दलों के फल, ब्रह्मग्रन्थि, चौबीस हजार नाड़ियाँ, सुषुम्ना आदि मुख्य नाडियाँ, उनके स्थान-कार्य का विस्तृत विवेचन कर कहा गया कि ऐसे मलमूत्रसमन्वित देह में योगी योग-साधना करते हैं । कोलाहलपूर्ण संसार में योग-साधना कठिन है । इसलिये योगी आधी रात को साधना करते हैं ॥ ४४७-६९३ ॥

देवी के द्वारा यह पूछे जाने पर कि इस नश्वर शरीर से योगी अमृतत्व-साधना कैसे करते हैं? महाकाल ने कहा कि अमृतत्व-प्राप्ति के लिये हठयोग नहीं करना चाहिये । इससे मृत्यु हो जाया करती है । रोग भी सम्भावित होते हैं । इसलिये क्रामिक योग करना चाहिये । इस सन्दर्भ में गुरु के उपदेश के अनुसार अभ्यास, औषध का प्रयोग, मितभोजन और योगकार्योपयोगी क्रियायें क्रम कहलाती हैं । इसी क्रम में यह बतलाया गया कि देवयान के दो प्रकार हैं—प्रवृत्तिमार्ग एवं निवृत्तिमार्ग । निवृत्तिमार्ग भी दो प्रकार का होता है—१. बाह्य और २. आभ्यन्तर । इनमें से किसी भी एक के करने से इष्टसिद्धि होती है । आगे चलकर दश यम, दश नियम, दश आसन, तीन प्राणायाम, पाँच ध्यान, छः धारणाओं का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया गया है । इसी बीच में दूसरी बार नाड़ी एवं उसकी शुद्धि की चर्चा की गयी

है । शरीरस्थ बहत्तर हजार नाडियों के मूल कन्द के आकार की चर्चा कर कुण्डलिनी शक्ति का उल्लेख किया गया है । पञ्च वायुओं में प्राणवायु मुख्य है और वह कन्द के नीचे, मुख और नासिका के मध्य, हृदय, नाभिमण्डल एवं पैर के अङ्गूठे में भी स्वयं रहता है । इसी प्रकार अपान आदि के भी स्थान बतलाये गये हैं ॥ ६९४-८०१ ॥

अपान आदि अन्य वायुओं के स्थानों एवं कर्म का वर्णन कर नाड़ी के शोधन की विधि बतलायी गयी है । नाड़ी-शुद्धि के लक्षण, शरीरलघुता आदि को बतला कर प्राणायाम, उसके भेद, प्रणव का अर्थ बतलाने के बाद प्राणायाम को बार-बार करने को कहा गया है । इसके साथ ही उसकी प्रक्रिया, उत्तम अधम आदि भेद का वर्णन करते हुए कहा गया कि पूरक रेचक रहित केवल कुम्भक के सिद्ध हो जाने पर शरीर में वीणादण्ड के समान उठते हुए नाद का अनुभव होता है । यही वायुजय का लक्षण है । यह प्राण जब नाभि के नीचे स्थित अग्नि के साथ संयुक्त होता है तो कुण्डली के पास जाकर उसमें उष्णता उत्पन्न करता है । फलत: वहाँ सर्पस्वरूपा कुण्डलिनी शक्ति का जागरण होता है और वह धीरे-धीरे उठकर ब्रह्मरन्ध्र तक पहुँच जाती है । अग्निसहित प्राण जब सारे शरीर को व्याप्त कर लेता है तब शरीर अत्यन्त हल्का हो जाता है । जीव ब्रह्म हो जाता है । इस प्रकार चार योगाङ्गों—प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान और धारणा की चर्चा की गयी है ॥ ८०२-८८५ ॥

आभ्यन्तर प्रत्याहार को बतलाते हुए कहा गया कि इन्द्रियों के विषयों के साथ स्वाभाविक विचरण को बलात् आहृत करने को आभ्यन्तर प्रत्याहार कहा जाता है । इसके अतिरिक्त पादाङ्गुष्ठ आदि अठारह स्थानों से वायु को खींचकर हृदय या उदर में ले आना और वहीं रोकना भी उच्च स्तर का प्रत्याहार है । इसके पश्चात् पञ्चधारणाओं के वर्णनक्रम में कहा गया कि हृदय एवं उदर में बाह्य आकाश का धारण धारणा है । शरीर में पैर से लेकर घुठनों तक पृथिवी स्थान, जानु से पायु तक जल का, पायु से हृदय तक अग्नि का, हृदय से भ्रू तक वायु का और भ्रूमध्य से मूर्द्धा तक आकाश का स्थान है । इन स्थानों में पृथिवी आदि के बीजों—लं वं रं यं हं की धारणा करनी चाहिये । इसी क्रम से पृथिवी में ब्रह्मा, जल में विष्णु, तेज में रुद्र, वायु में महत्तत्त्व और आकाश में अव्यक्त परमेश्वर की धारणा करनी चाहिये। पृथिवी आदि तत्तत् स्थानों में पाँचघटी धारणा से पृथिवी पर विजय, सर्वरोगमुक्ति, अग्नि का न होना, खेचरत्व तथा जीवन्मुक्ति मिलती है ॥ ८८६-९१६ ॥

ध्यान को बन्धमोक्ष का कारण बतलाया गया है । यह दो प्रकार का होता है—सगुण और निर्गुण । निर्गुण ध्यान के स्वरूप को बतलाते हुए कहा गया कि स्वयं का निर्गुण, निराकार, गन्ध-रस आदि से रहित, सर्वदृक्, सर्वमय ब्रह्म का समझना निर्गुण ध्यान है । इसी प्रकार गुह्यकाली का भी ज्योतिर्मयी, नित्य

सूक्ष्मातिसूक्ष्म, निरञ्जना, सूर्यकोटिसमशुभ्रा ध्यान निर्गुण ध्यान है। काली का सगुण ध्यान इस प्रकार करना चाहिये—कन्दमूल से उठे अष्टदल कमल पर दशवक्त्रा गुह्यकाली का ध्यान करने का विधान है। वह काली भयङ्कर, लपलपाती जीभवाली, भूत-प्रेत आदि से घिरी हुई, शवाकार शिव पर आरूढ़, खुले बालों वाली, उत्तुङ्गपीन वरवक्षोज वाली, परिवार के सहित, दिगम्बर इत्यादि हैं। साधक सूर्यमण्डल में स्वर्णमयी देहवाली काली का ध्यान कर कैवल्य प्राप्त करता है। इसके पश्चात् हठयोग का वर्णन किया गया है॥ ९१७-९६५॥

हठयोग के उपक्रम में कहा गया कि इड़ा-पिङ्गला दोनों नाड़ियाँ कण्ठ का भेदन कर जब ब्रह्मरन्ध्र में पहुँच जाती हैं तो वहाँ से गिरने वाली अमृत की धारा सारे शरीर को आप्लावित कर देती है। इससे साधक अजर-अमर हो जाता है। जिह्वा को उल्टीकर उस अमृत का पान करना चाहिये। इसके लिये जिह्वा का दोहन कर उसे लम्बी बनाया जाता है। इससे शरीर के दोष हट जाते हैं और सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। जिह्वा लम्बी होकर जब अन्दर-अन्दर आज्ञाचक्र का स्पर्श करती है, तब उच्चस्तरीय सिद्धियाँ हस्तगत होती हैं। उसके ऊपर जब ललाटस्थ मनश्चक्र में जिह्वा का स्पर्श होता है तब शरीर वज्रवत् हो जाता है। उससे आगे बढ़ने पर जब जिह्वाग्र का प्रवेश सोम नामक षोडशदल कमल में होता है तब साधक देवता हो जाता है। उसकी छाया नहीं होती। निमेष नहीं होता। अणिमा आदि से समृद्ध होकर वह देवताओं के साथ रहता है। इस प्रकार सात वर्षों के सतत् अभ्यास से वह सहस्रदल सम्भेदी हो जाता है। ऐसा होने पर वह परार्धजीवी होता है। पाञ्च-भौतिक शरीर से ही वह रुद्र हो जाता है। रुद्रत्व प्राप्त होने के बाद वह अद्‌भुत शक्ति-सम्पन्न हो जाता है। मृत्यु-अमरत्व-कैवल्य-पुनर्जन्म सब कुछ उसकी इच्छानुसार होता है। वह कल्पान्तजीवी होता है॥ ९६६-१०२०॥

इसके अनन्तर यह बतलाया गया कि सृष्टि के आदि में शून्य ही था। उससे चतुर्वर्णात्मक बीज उत्पन्न हुआ। वही ओम् ब्रह्म हुआ। उसी को प्रणव कहते हैं। यह वाचक है। रुद्र इसका वाच्य है। इसी का विस्तृतरूप नाद है। मरीचि, अत्रि आदि ऋषिगण, मुनिलोग इसी नाद के ऊपर महादेव रुद्र का साक्षात्कार करते हैं। साधक को चाहिये कि वह ॐकाररूपी रुद्र का ध्यान करता हुआ प्रणव का जप करे। ऐसा साधक कल्पान्त के बाद भी जीवित रहता है। इस रुद्र के ध्यान के सन्दर्भ में बतलाया गया कि हृदयकमल, जो कि अष्टदलों एवं द्वादशाङ्गुल नाल वाला है, के ऊपर शुद्ध स्फटिक के समान रुद्र का ध्यान करना चाहिये। उनके ऊपर षोडशदल कमल से अमृतधारा गिर रही है। उससे वे आप्लावित हो रहे हैं। गुह्यकाली एवं शिव के सामरस्य के प्राप्त होने पर साधक के लिये कुछ भी प्राप्तव्य नहीं रहता॥ १०२१-१०६५॥

देवी ने काल के विषय में प्रश्न किया । उत्तर देते हुए महाकाल ने कहा—सूर्य जितने समय में एक परमाणु पर पहुँचता है वह समय कर्परी कहलाता है । दश कर्परी का एक विप्रु होता है । सौ विप्रु की एक तुटि होती है । सौ तुटि का एक तत्पर, तीस तत्पर का एक निमेष, तीस निमेष की एक काष्ठा, तीस काष्ठा की एक कला और तीस कला का एक क्षण होता है । छः क्षणों की एक नाड़ी, दो नाडी का एक मुहूर्त्त, तीस मुहूर्त्त का एक दिन-रात होता है । इसी प्रकार क्रमशः वर्ष का मान बतलाकर कहा गया कि मनुष्यों के एक वर्ष का देवताओं का एक दिन-रात होता है । इस प्रकार के बारह वर्षों का देवताओं का एक वर्ष होता है । देवताओं के इस चार हजार वर्षों का सत्ययुग होता है । इसी क्रम में चार सौ वर्षों की एक सन्ध्या होती है । इस प्रकार दोनों सन्धिकाल मिलकर आठ सौ दिव्य वर्षों के होते हैं । सत्रह लाख अट्ठाईस हजार दिव्य वर्ष सत्ययुग का भोगकाल होता है। इसका तीन चौथाई त्रेता, सत्ययुग का आधा द्वापर एवं सत्ययुग का एक चौथाई कलियुग का भोगकाल होता है ॥ १०६६-१०९० ॥

इकहत्तर दिव्य युगों का एक मन्वन्तर होता है। तीस करोड़ सँड़सठ लाख बीस हजार दिव्यवर्षों का ब्रह्मा का एक दिन होता है । इस बीच चौदह मनु शासन करते हैं । ब्रह्मा अपने दिव्यवर्षों से एक सौ वर्ष जीवित होकर मर जाते हैं । पाँच ब्रह्मा के जन्म-मृत्यु का काल रुद्र का एक दिन होता है । उतनी ही बड़ी रुद्र की रात्रि भी होती है । रुद्र के एक दिन-रात में दश ब्रह्मा उत्पन्न होते हैं और मरते हैं। रुद्र के एक सौ बीस दिन का शिव का एक मास होता है । अँड़तालिस मासों का शिव का एक वर्ष होता है । इस परिमाण से शिव का स्थिति काल बारह हजार वर्ष होता है । इसके अनन्तर वह अपनी शक्ति में लीन हो जाते हैं ॥ १०९१-१११२ ॥

आगे चलकर काली के द्वारा धारण की गयी एक हजार अस्सी मुण्डों की माला का रहस्य बतलाया गया है । इसमें एक सौ अस्सी मुण्ड विष्णु के, तीन सौ साठ ब्रह्मा के, एक सौ बीस इन्द्र के, एक सौ तीस-एक सौ तीस काल और मृत्यु के, यम के बीस, अग्नि के दश, वायु के सत्तर, काम के बीस, निर्ऋति के आठ, चन्द्र-सूर्य के पाँच-पाँच, वासुकि और अनन्त के दो-दो, हयग्रीव के तीन, कूर्म, वामन, वराह, मत्स्य और नृसिंह के तीन-तीन मुण्ड हैं । इस प्रकार शिव के कालमान को बतलाकर कहा गया कि ज्ञानी भी इतने ही काल तक जीवित रहता है। भगवान् शिव ने योग और भोग नामक दो मार्गों का वर्णन किया । योग का अभ्यास करने वाला मनुष्य शरीरधारी रुद्र हो जाता है ॥ १११३-११३४ ॥

...※...

# विषयानुक्रमणिका

।। श्रीः ।।

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला
४०३

# महाकालसंहिता

## (गुह्यकालीखण्डः)

[ चतुर्थो भागः * १२ पटलः ]

ज्ञानवतीहिन्दीभाष्येण विभूषिता

व्याख्याकारः सम्पादकश्च

**आचार्य राधेश्याम चतुर्वेदी**

व्याकरणाचार्यः एम.ए.(संस्कृत), पीएच.डी., लब्धस्वर्णपदकः
शास्त्रचूडामणिविद्वान्
इमेरिटस प्रोफेसर एवं अध्यक्षः, संस्कृत विभागः
देवसंस्कृतिविश्वविद्यालयः, गायत्रीकुञ्जशान्तिकुञ्जः, हरिद्वार
(पूर्वाचार्यः) संस्कृतविभागः, कलासङ्कायः
काशीहिन्दूविश्वविद्यालयः, वाराणसी

**चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन**
**वाराणसी**

# गुह्यकालीखण्ड—४

## (द्वादश पटल)

### संक्षिप्त परिचय

**द्वादश पटल**—पूर्व पटल में नित्यपूजा का विवरण प्रस्तुत करने के बाद प्रस्तुत पटल में काम्य एवं नैमित्तिक पूजा का विवरण सर्वप्रारम्भ में दिया गया है। निमित्तों का परिचय देते हुए कहा गया कि चन्द्र-सूर्य-ग्रहण, पुत्र का जन्मदिन आदि संस्कार, तीर्थयात्रागमन, आश्रमान्तरगमन, कारागार से मुक्ति, ग्रहपीड़ा, राजभय आदि का उपस्थित होना निमित्त कहलाता है। इस नैमित्तिक अर्चन के लिये विशिष्ट तिथियाँ—जैसे अष्टमी नवमी चतुर्दशी, अमावास्या पूर्णिमा ग्राह्य होती हैं। प्रत्येक मास की विशिष्ट तिथियाँ भी होती हैं जिनमें पूजा सम्पन्न की जाती है। उपर्युक्त कृत्य सभी मतानुयायियों के लिए करणीय होते हैं। मौलेय मत में दुर्वाङ्कुरारोपण भी करना आवश्यक होता है। इसके लिये भी विशिष्ट तिथियाँ होती हैं। इसी प्रकार भाण्डिकेर मत में कुन्द का आरोपण अवश्य करने का विधान है। यहाँ उसकी विधि बतलायी गयी है ॥ १-४६ ॥

देवी के शाकम्भरी नाम का रहस्योद्घाटन करते हुए कहा गया है कि त्रेतायुग में फाल्गुन कृष्ण अष्टमी को काली का शाकम्भरी के रूप मे प्रादुर्भाव हुआ। उस समय एक सौ वर्षों तक जब अकाल पड़ा और प्रजा भूख-प्यास से मरने लगी तब देवी ने शाक का रूप धारण कर विश्व की रक्षा की। चैत्र शुक्ल अष्टमी में षडानन ने तारकासुर का वध किया था। इसीलिये इस तिथि का बड़ा महत्त्व है। चैत्र शुक्ल सप्तमी दमनकारोपण की तिथि है। कापालिक मत में इसी तिथि को अशोकारोपण तथा दमनकारोपण भी किया जाता है। साथ ही इनके पुष्पों-पत्रों से महिषासुरमर्दिनी की पूजा की जाती है ॥ ४७-७४ ॥

शारदीपूजा एवं वासन्तीपूजा—ये दो पूजायें अति महत्त्व की हैं। रामचन्द्र जब युद्ध में रावण का वध न कर सके तब आश्विन मास में ब्रह्मा ने माँ काली का उद्बोधन किया। तब से शारदीपूजा का प्रचलन हुआ। उस समय वर्ष का प्रारम्भ वसन्त से होता था। अत: उस समय कालिकार्चन किया जाता था। दमनारोपण का कारण बतलाते हुए कहा गया कि हिमालय पर तपस्या करते हुए शङ्कर ने जब कामदेव को भस्म कर दिया और पार्वती का रूद्र के साथ विवाह हो गया तब रति और पार्वती ने ईशान से प्रार्थना की। फलत: चैत्र शुक्ल त्रयोदशी को शिव ने काम को पुनर्जीवित कर दिया। इसी कारण कामदेव-दम्पती इस दिन अशोक की

पूजा करते हैं । इस पूजा के फल का वर्णन करने के बाद दमनभञ्जी महोत्सव का वर्णन किया गया है ।। ७५-१०९ ।।

ग्रहणकालिक-विधि का वर्णन करते हुए कहा गया कि यह महान् पुण्यकाल होता है । इसमें जप होम दान श्राद्ध करना चाहिए । इस काल में कुएँ का भी जल गङ्गाजल के समान हो जाता है । तालाब नदी का जल क्रमशः सौ-सौ गुना महत्त्वपूर्ण हो जाता है । इसी प्रकार स्नान की अपेक्षा होम, होम की अपेक्षा श्राद्ध, उसकी अपेक्षा जप और जप की अपेक्षा दान सौ-सौ गुना अधिक महत्त्व का होता है । इस समय मूलमन्त्र की सिद्धि भी की जाती है । विशेष तीर्थों में ग्रहणकालिक स्नान का भी महत्त्व बतलाया गया है । रविवार को सूर्य और चन्द्रवार को चन्द्रग्रहण महाफलदायी होता है । आगे चल कर तिथियों का निर्णय बतलाया गया है कि किस तिथि का काल कब प्रशस्य होता है ।। ११०-१७८ ।।

नैमित्तिक पूजा का काल बतलाते हुए कहा गया कि गृह ग्राम पुर-प्रवेश, रोगमुक्त के मङ्गलार्थ, विद्यारम्भ, महामारी के नाश और इसी प्रकार अन्य अवसरों पर भी यह पूजा करनी चाहिये । नैमित्तिक पूजा न करने वाला महापापी होता है । नैमित्तिक पूजा के पहले एकभुक्त होना आदि छह कर्म करने होते हैं । फूलों का चयन भी बतलाया गया है कि उस समय किस महीने में कौन से पुष्प अर्पणीय होते हैं । इसी प्रकार करणीय न्यासों की भी चर्चा की गयी है । अनेक सम्प्रदायों के अनुसार पात्रों की संख्या का भी निर्धारण किया गया है ।। १७९-२३३ ।।

पार्वती ने प्रश्न किया कि जब सारे तन्त्रों के प्रवक्ता आप ही हैं तो सब में ऐकमत्य क्यों नहीं है? शिव ने उत्तर देते हुए कहा कि जिस प्रकार चारो वेद अठारहों पुराण इतिहास आदि में एक ही धर्म कहा गया है किन्तु मुनियों ने अलग-अलग उनका विवेचन किया । उसी प्रकार लोगों के आचार-विचार को देखते हुए मेरे द्वारा पात्रता को दृष्टि में रखकर अनेक मतों का प्रवर्त्तन किया गया । कापालिकों से लेकर जितने भी शाक्तमत हैं इनमें जो जिस मत को करने में समर्थ है उसे उसी को करना चाहिये । एक मत के अनुष्ठान से समग्र का फल मिलता है ।। २३४-२७० ।।

मुख्य शिवाबलि गौण शिवाबलि पञ्चायतन पूजा आवरण पूजा एवं उसके अन्तर्गत षडाम्नायगत देवीपूजा के वर्णन के पश्चात् बतलाया गया कि आवरण पूजा और नित्य पूजा में अनुक्तकृत्यों का एक-दूसरे से ग्रहण कर लेना चाहिये । आगे चल कर योगमार्ग एवं आगम में उदित प्राणायामों का वर्णन करने के बाद शिवशक्तिन्यास के ऋषि, षडङ्गन्यास एवं उसके मन्त्र का उद्धार का वर्णन किया गया है । इसके अनन्तर शिव एवं शक्ति के पचास-पचास नामों का कीर्त्तन कर कालीपञ्जरन्यास के ऋषि, षडङ्गन्यास, सामान्य मन्त्रोद्धार, विशेष मन्त्रोद्धार को बतला कर इसके स्थान का निर्देश किया गया है ।। २७०-४१७ ।।

अर्घ्यपात्रन्यास के सामान्य एवं विशेष मन्त्र का उद्धार करने के बाद श्रीपात्र-स्थापन की अपेक्षा जो अन्य वैशिष्ट्य है उसका भी वर्णन किया गया है। शङ्खप्रक्षालन मन्त्र, शङ्ख की पूजा, दिगम्बर मत के अनुसार धूप दीप नैवेद्य के अर्पण को बतला कर छह पूज्य तीर्थों के नाम बतलाये गये हैं। इसी प्रकार सात पूज्य नद और सात पूज्य नदियों के नामों को बतला कर अर्घ्यपात्र-रचना की चर्चा की गयी है। आत्मपूजा के सन्दर्भ में कहा गया कि अपने देह में तत्तत् अङ्गों में तत्तत् इष्टदेवता का ध्यान कर 'हंस:' 'सोऽहम्' का जप करना चाहिये और अपना इष्टदेवरूप में ध्यान करना चाहिये। फिर गुरु पर गुरु परापर गुरु परमेष्ठी गुरु आदि का ध्यान कर पञ्चायतन का ध्यान करना चाहिये। इसमें गणपति, सूर्य, विष्णु या हृषीकेश का उनकी आवरणदेवताओं अस्त्र आदि सहित ध्यान-पूजन करना चाहिये। महेशान के तीन मन्त्रों, उनके ऋषि आदि, ध्यान, आवरणपूजा, अस्त्रपूजा, स्तुति का वर्णन कर मुख्य देवता काली के पुरश्चरण का प्रारम्भ किया गया ॥ ४१८-५९९ ॥

सबसे पहले आवाहन मन्त्र का उद्धार फिर पीठ की प्राण-प्रतिष्ठा का मन्त्र वतलाया गया। इस मन्त्र का माहात्म्य यह है कि काली के नित्य-नैमित्तिक अर्चन में भी इसका प्रयोग होता है। प्रासाद-देवालय की स्थापना, मूर्त्ति यन्त्र की स्थापना में इस मन्त्र का प्रयोग न करने पर काली सन्निहित नहीं होती। कालीपूजा के क्रम में पहले अष्ट द्वारपाल, अष्ट दिक्पाल, देव्यनुज्ञा, पात्रस्थापन करने का विधान है। पात्रों की संख्या छत्तीस होनी चाहिये। दिगम्बर मत में तीस पात्रों की स्थापना की जाती है। आगे चल कर मौलेय एवं भाण्डिकेर मतों के अनुसार पात्रों की स्थापना का वर्णन कर वैदिक मत में उनकी स्थापना बतलायी गयी। इसके पश्चात् पात्र-स्थापना के कर्मकाण्ड की चर्चा की गयी है ॥ ६००-७२६ ॥

त्रिपादी के प्रक्षालन मन्त्र का उद्धार बतलाकर कुलकुम्भ की स्थापना एवं पूजा का वर्णन किया गया है। अष्ट दिशाओं में स्थापित आठ घटों का पूजन सम्पन्न कर आठ नामों का उच्चारण करते हुए सुरा का संशोधन करने का विधान है। कुलद्रव्य का आलोडन करने के बाद कापालिक एवं दिगम्बर मत के अनुसार मात्रालम्भन आदि कुछ अधिक कृत्य के विधान को करने के लिये कहा गया है। इसी प्रकार मौलेय एवं भाण्डिकेर मत की भी चर्चा की गयी है। इसके पश्चात् दशदिग्बन्धन का मन्त्रोल्लेख किया गया है। पञ्चरत्न पूजा, एकादशपात्र-स्थापन, षडाम्नाय की चौबीस देवियों की पूजा, चतुर्युग, चतुर्वेद, अष्ट दिक्पाल, पञ्च प्रेत, पञ्च भैरव आदि का आवाहन-पूजन करने का विधान है। एक विशिष्ट अनुष्ठान कुल संव्यत्यय होता है उसको भी करने का विधान है ॥ ७२७-८५५ ॥

इसके अनन्तर प्रधान देवता काली की पूजा का वर्णन प्रस्तुत है। इसमें १. आवाहन, २. आसनदान, ३. पाद्यदान, ४. अर्घदान, ५. आचमनीय, ६.

स्नानीय, ७. मधुपर्क, ८. आचमन, ९. वस्त्र, १०. शववस्त्र, ११. भूषण, १२. गन्ध, १३. स्वयम्भूकुसुम, १४. पुष्प, १५. माला, १६. सिन्दूर, १७. अञ्जन, १८. अलक्तक, १९. धूप, २०. धूपविशेष, २१. अगुरुधूप, २२. दीप, २३. दीपित नैवेद्य, २४. फाणित नैवेद्य, २५. विस्र नैवेद्य, २६. मिश्र नैवेद्य, २७. शीतल जल, २८. ताम्बूल, २९. सकलवस्तुदान । उपर्युक्त वस्तुओं के दान के मन्त्रों का उद्धार बतलाकर समर्पण करने की विधि बतलायी गयी है । यह भी बतलाया गया कि राजोपचार दान के लिये जो मन्त्र जो वस्तुयें पूर्व में उल्लिखित हैं उनका भी यहाँ विनियोग करना चाहिये । आगे चलकर देवी के महाचण्डेश्वरी आदि दश नामों का उल्लेख किया गया है । देवी के दशवक्त्रों को बतलाया गया है । वे हैं—१. द्विप (वाघ), २. सिंह, ३. सियार, ४. बानर, ५. भालू, ६. मनुष्य, ७. गरुड़, ८. मकर, ९. गज और १०. घोड़ा । अस्त्र और अस्त्रवती की पूजा एवं उसके मन्त्रोद्धार की चर्चा की गयी है । इसी क्रम में देवी के सत्ताईस नेत्र, बीस कान, बीस नासापुर आदि का कथन किया गया है ॥ ८५६-१०३४ ॥

इसके पश्चात् देवी की आवरणदेवताओं की पूजा के लिये देवी से अनुज्ञा प्राप्त कर आवरणपूजा का उपक्रम वर्णित है । इस क्रम में समुद्र तट आदि देवी के आलय, भैरवीकोटिघटित चारदीवारी, अष्ट श्मशान की पूजा करणीय होती है । अष्ट श्मशानों के नाम ये हैं—१. महाघोर, २. कालदण्ड, ३. ज्वालाकुल, ४. चण्डपाश, ५. कापालिक, ६. धूमाकुल, ७. भीमाङ्गार और ८. भूतनाथ । इनकी आठो दिशाओं में पूजा करने का विधान है । आठ श्मशानों की दिशा-विदिशायें निम्नलिखित हैं—१. स्वास्तिकावर्त्त, २. ज्वालावर्त्त, ३. याम्यावर्त्त, ४. अनन्यावर्त्त, ५. भद्रावर्त्त, ६. सौम्यावर्त्त, ७. मङ्गलावर्त्त और ८. सम्भ्रमावर्त्त । इसके अनन्तर द्वारपाल पूजा का विधान है । आठ द्वारपालों के नाम ये हैं—१. कालपाश, २. भीमपाश, ३. यमपाश, ४. मृत्युपाश, ५. दण्डपाश, ६. नागपाश, ७. ज्वालपाश और ८. घोरपाश । इसी प्रकार अष्ट त्रिशूलों की पूजा का विधान है । अष्ट त्रिशूलों के नाम—१. जयावह, २. विद्युदन्त्र, ३. चण्डखण्ड, ४. विकराल, ५. कालकूट, ६. घोरनाद, ७. विमारण और ८. शोणितोद । चार वज्रों की भी पूजा करणीय होती है। वे हैं—१. उल्कामुख, २. अङ्गारमय, ३. भस्मान्तक और ४. भयङ्कर । इसके बाद सिंहासन पूजा का विस्तृत विवरण प्रस्तुत कर पूजामन्त्र का उद्धार बतलाया गया है ॥ १०३५-११२० ॥

विशेष मन्त्र से अष्ट दिक्पालों की पूजा को बतला कर कापालिक रीति से दिक्पाल पूजा के प्रकार का वर्णन है । इन वर्णनों में मन्त्रोद्धार की चर्चा आवश्यक रूप से की गयी है । इसके पश्चात् शिवासन पूजा के लिये प्रयोज्य मन्त्र का उद्धार वर्णित है । इस पूजा में निगम एवं आगम दोनों की विधेयता कही गयी है । संसार में ऐसा कोई भी गुण भाव द्रव्य क्रिया शास्त्र आदि नहीं है जिसकी अधिष्ठात्री

काली न हो । काली के वक्त्र के आकार १६१ प्रकार के हैं । इसके अतिरिक्त पञ्चार पूजा में काली के १२० प्रकार के मुखों की चर्चा है । इसके पश्चात् छत्तीस दलों पर काली की पूजा का वर्णन है । इसी प्रकार बत्तीस दलों, चौबीस, सोलह, बारह और अष्ट दलों पर भी कालीपूजा का वर्णन मन्त्रोद्धार के साथ किया गया है। इसके पश्चात् नरसिंह के इक्यावन नाम, भैरव के इक्यावन नाम, विनायक के इक्यावन नाम, काम के इक्यावन नाम, शक्ति के इक्यावन नाम एवं डाकिनी के इक्यावन नामों का उल्लेख किया गया है ॥ ११२१-१२४५ ॥

अष्टवृत्त पर पूजी जाने वाली कालियों के नाम हैं—१. अमूर्त्तकालिका, २. असङ्गकालिका, ३. अदृश्यकालिका, ४. अनादिकालिका, ५. अव्यक्तकालिका, ६. अचिन्त्यकालिका, ७. अक्षरकालिका और ८. अवेद्यकालिका । इसी प्रकार अष्टकोणों की अधिष्ठात्री कालियों का नाम दिया गया है । आगे चलकर नवार पूजा की चर्चा की गयी है । नवार पूजा में भाण्डिकेर एवं दिगम्बर मतानुयायियों का वर्णन करते हुए कहा गया कि वे इस सन्दर्भ में मन्त्रों के साथ लक्ष्मी आदि एक सौ बीस देवियों की अर्चना करते हैं । इसी प्रकार पञ्चार में देवताओं की पूजा की जाती है । ये पञ्चार सृष्टिकाली आदि के आवास माने जाते हैं । इसमें प्रथम कोण सृष्टिकाली का है । इस काली का मन्त्रोद्धार बतलाकर इसके लिये अर्पणीय बलि का मन्त्र उद्धृत किया गया है । पूजा समापन मन्त्र का उद्धार बतलाकर कहा गया कि इस काली के चौवीस भेद हैं ॥ १२४६-१३१२ ॥

इसी प्रकार स्थितिकाली के नाम बतलाते हुए कहा गया कि सरभ चातक आदि चौबीस नामों के पश्चात् कल्प आदि चौबीस पदों को जोड़ कर नाम बना कर स्थितिकाली की मूलपीठ पर पूजा की जाती है । स्थितिकाली के पूजामन्त्र का उद्धार बतला कर उसके लिये बलि-अर्पण का मन्त्र बतलाया गया है । संहारकाली के परिवारों में भी उष्ट्र आदि चौबीस जीव हैं । इनके भी दीपकाली चण्डालकाली आदि नाम होते हैं । इनकी भी संख्या चौबीस है । इनकी पूजा का मन्त्र बतला कर बलि-अर्पण मन्त्र का उद्धार बतलाया गया है । इसी प्रकार अनाख्याकाली के भी ऊर्ण नाभ आदि चौबीस भेद हैं । विरञ्चि विभूति आदि के पश्चात् 'काली' पद जोड़ना चाहिये । इसी क्रम में इस काली के बल्यमन्त्र का उद्धार भी बतलाया गया है । अन्तिम एवं पञ्चम भासाकाली के भी चौबीस नाम हैं । 'आनन' पद के बाद प्रयोज्यमान कर्पर आदि पद भी चौबीस हैं । इसके लिये अर्पणीय बलि का मन्त्रोद्धार बतलाकर पञ्चारपूजा की पूर्णता के विषय में मन्त्र का निरूपण किया गया है । इस प्रकार कालियों की कुल संख्या २८६ है ॥ १३१३-१४१२ ॥

काली की त्र्यारपूजा बतलाने के साथ-साथ उसके मन्त्र का उद्धार भी बतलाया गया है । आगे चलकर विन्दुपूजा की दो प्रकार की पूजा बतलायी गयी है । इसके

पश्चात् पात्रों की अर्पणविधि का निर्वचन कर आठ प्रकार की बलि का उल्लेख किया गया है । ये हैं—१. मूलदेवता, २. गणेश, ३. वटुक, ४. क्षेत्रपाल, ५. मातायें, ६. योगिनियाँ, ७. डाकिनियाँ, ८. स्थानदेवता । इसके मन्त्र को उद्धृत किया गया है । इसके पश्चात् मूलदेवी के मन्त्र का उद्धार वर्णित है । इसके अनन्तर गणेश की बलि का मन्त्र बतलाया गया । इसी प्रकार वटुक, क्षेत्रपाल, मातायें, डाकिनी, योगिनी, स्थानदेवता के लिये दातव्य बलि का मन्त्र बतलाया गया है । पुन: विन्दुपूजा-विधि का निरूपण कर मन्त्रजप, स्तोत्र आदि के पाठ का विधान वर्णित है ।। १४१३-१५५६ ।।

पात्र-स्थापनपूर्वक शक्ति की पूजा का विधान बतलाते हुए कहा गया है कि पहले शक्ति का ध्यान करना चाहिये । उस क्रम में पहले आवाहन किया जाता है । इसी क्रम मे कौलिक भाण्डिकेर एवं मौलेय मतों के अनुसार इति कर्त्तव्यता का विवरण दिया गया है । नैमित्तिक पूजा में शक्ति के साथ रतोत्सव को ऐच्छिक बतलाया गया है जबकि नित्यपूजा में यह अवश्य करणीय है । जहाँ तक पात्रतर्पण का प्रश्न है कापालिक मत में छत्तीस पात्रों का तर्पण किया जाना चाहिए । दिगम्बर मत में तीस पात्रों के तर्पण का विधान है । मौलेय मत में चौबीस पात्रों का तर्पण विहित है । भाण्डिकेर मत में अठारह पात्रों के तर्पण का विधान है । वैदिकमार्ग में बारह पात्रों का तर्पण कहा गया है । शिव कहते हैं कि सभी मतों मे मेरा मत श्रेष्ठ है । आगे चलकर अपने मत में पात्रतर्पण के सन्दर्भ में पहले मन्त्र का सामान्य उद्धार बतलाया गया है । उसके पश्चात् उसका विशेष उद्धार वर्णित है ।। १५५७-१७१० ।।

साधक जिस क्रम से तर्पण करता है उसी क्रम से उसे कुल संव्यत्यय भी करना चाहिये । इस क्रम में उसका विधान बतलाया गया है । इसके पश्चात् श्रौत और आगमिक जीवबलि की चर्चा करते हुए वसोर्धारा की कथा बतलायी गयी है कि देवता और ऋषि बलि के द्रव्यों में मतभेद रखते थे । देवता पशुबलि चाहते थे और ऋषि अन्नबलि । कौन-सी उचित है? इसका उत्तर पाने के लिये वे धर्मज्ञ राजा वसु के पास गये । वसु ने ऋषियों के पक्ष में निर्णय दिया । देवताओं के शाप से वसु रसातल को चले गये तब ऋषियों ने यज्ञ में वसुधारा का विधान कर राजा की वृत्ति सुनिश्चित की । इसके पश्चात् तत्तद् देवों के लिये भिन्न-भिन्न बालेय पशुओं के नाम बतलाये गये हैं । यह भी बतलाया गया कि किस जीव की बलि से काली कितने दिनों तक प्रसन्न रहती हैं । निषिद्ध बल्य पशु की भी चर्चा की गयी है । ब्राह्मण आदि के द्वारा देय बलि का भी वर्णन किया गया है । आगे चलकर मारने वाले मनुष्य एवं बल्य पशु के विषय में चर्चा कर कहा गया कि भागने वाले पशु की बलि नहीं देनी चाहिये । अनेक पशुओं की बलि के लिये अनेक मारने वाले होने चाहिये ।। १७११-१८९२ ।।

पशु पक्षीगणों की अधिष्ठात्री देवताओं का वर्णन करने के पश्चात् गुड शर्करा दुग्ध आदि देवों की चर्चा की गयी है । वस्त्रों पात्रों वृक्षों लताओं चर्म आदि की देवतायें भी बतलायी गयी हैं । पात्रों की चर्चा करते हुए कहा गया कि हत पशु का रक्त सोना चाँदी आदि के पात्रों में एकत्रित करना चहिये । माँस-ग्रहण की भी विधि बतलायी गयी है । पशु पक्षी के प्रोक्षण की चर्चा कर उनके स्नपन, माल्यार्पण, सिन्दूरार्पण, सामान्यार्घ्यार्पण आदि का उल्लेख कर पुष्पाञ्जलि प्रार्थना का वर्णन किया गया है । महिष प्रार्थना का विशेष वर्णन है । इसके अनन्तर सङ्कल्प की विधि बतलायी गयी है । बाद में पशु के कान में पशुगायत्री का उच्चारण करना चाहिये । अन्य मन्त्र का उद्धार बतलाकर खड्ग में काली का आवाहन करने को कहा गया है । खड्ग की पूजा कर उससे प्रार्थना भी करनी चाहिए । पुनः उसे प्रणाम कर मन्त्र का उच्चारण कर उसको मार कर उसका रक्त किसी पात्र में ले लेना चाहिये । उस रक्त को देवी के लिये अर्पित करना चाहिये । अर्पण के मन्त्र का भी उद्धार बतलाया गया है । इसके पश्चात् देवी की स्तुति का वर्णन है । स्तुति के पश्चात् साधक साष्टाङ्ग प्रणाम करे ।। १८९३-२११० ।।

बलि के पश्चात् कहा गया कि यदि बल्य मनुष्य का कटा शिर भूमि पर रखने पर हँसे तो राजा की विजय एवं राज्य-लाभ होता है । इसी प्रकार अन्यान्य अशुभ फलों की भी चर्चा की गयी है । बलि के पश्चात् साधक-साधिकायें तथा अन्य शक्तियाँ मदिरा-पात्र का ग्रहण करें । उसके ग्रहण की विधि का वर्णन कर ग्रहण के तान्त्रिक मन्त्र का उल्लेख किया गया है । सुरा की स्तुति भी बतलायी गयी है । तत्पश्चात् उसकी दश आहुति देकर स्वयं पीना चाहिये और दूसरी शक्तियों को पिलाना चाहिये । इससे काली प्रसन्न होती हैं । भक्ष्य का भी प्रयोग करना चाहिये । उसके पश्चात् शान्तिपाठ आदि करना चाहिये । देवी के सामने चतुर्विध अन्न परोस कर शिवाबलि की तैयारी करनी चाहिये । इस बीच अन्य कार्य भी सम्पाद्य होते हैं । नैवेद्य निवेदन के मन्त्र को भी उद्धृत किया गया है । निशा-पूजा समाप्त होने तक कटे शिरों को वहीं रखना चाहिये । दिन बीतने के बाद पुनः नैमित्तिक पूजा का प्रारम्भ करना चाहिये । इस क्रम में भूतशुद्धि, विघ्न-निवारण आदि सभी कृत्य किये जाते हैं ।। २०११-२१८७ ।।

तादात्म्यन्यास से शिव-शक्ति का एकीकरण किया जाता है । इसे कापालिक ही जानते हैं । इस न्यास के ऋषि आदि का उल्लेख कर सामान्य एवं विशेष उद्धार बतलाया गया है । इसके पश्चात् अद्वैतन्यास की चर्चा की गयी है । इसमें भी ऋषि देवता आदि को बतलाकर मन्त्र का उद्धार वर्णित है । इसी क्रम में त्रिपादी और मूलपात्र की पूजा का भी उल्लेख किया गया है । फिर मूलमन्त्र का उच्चारण करते हुए काली को पाद्य आदि देना चहिये । काली के परिवारी देवियों की पूजा की चर्चा कर जप करना चाहिये । आरती कर सुधाधारास्तोत्र का पाठ

करना चाहिये । चौबीस पद्यों में इस स्तोत्र का कथन है । आरती, प्रणाम आदि के अनन्तर शिवाबलि देनी चाहिये । बलिदानमन्त्र का उल्लेख कर कहा गया कि शिवाओं के आगमन की प्रतीक्षा करनी चाहिये । यदि आयें तो साधक कालीबुद्धि से उन्हें प्रणाम करे । जब वे बलि-भक्षण कर रही हों तो भूतों के लिये बलि देनी चाहिये । उन्हें दूर से प्रणाम करना चाहिये एवं काली समझ कर स्तुति करनी चाहिये ॥ २१८८-२४२५ ॥

इसके बाद श्रीपात्र ग्रहण करना चाहिये और कुलकुम्भ का मद्य शक्तियों के साथ पीना चाहिये । यह कृत्य नग्न होकर किया जाता है । बिना सुराग्रहण और शक्तिसमागम के नैमित्तिक पूजा व्यर्थ होती है । समागम के बाद स्खलित रजवीर्य से चित्रक बनाना चाहिये । इसमें घृणा नहीं करनी चाहिये । काली से प्रार्थना करनी चाहिये कि जो इस मार्ग की निन्दा करता है हे मात:! आप उसका सर्वनाश कर दें। तत्पश्चात् अङ्गों की रक्षा के लिये प्रार्थना करनी चाहिये एवं परमेश्वरी को दिव्य शय्या पर सुलाना चाहिये । शङ्ख के जल से सबका अभिषेक करना चहिये ॥ २४२६-२४७४ ॥

# विषयानुक्रमणिका

॥ श्रीः ॥

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला
४०३

# महाकालसंहिता

## (गुह्यकालीखण्डः)

**[ पञ्चमो भागः * १३-१४ पटलात्मकः ]**

ज्ञानवतीहिन्दीभाष्येण विभूषिता

व्याख्याकारः सम्पादकश्च

**आचार्य राधेश्याम चतुर्वेदी**

व्याकरणाचार्यः एम.ए. (संस्कृत), पीएच.डी., लब्धस्वर्णपदकः
शास्त्रचूडामणिविद्वान्
इमेरिटस प्रोफेसर एवं अध्यक्षः, संस्कृत विभागः
देवसंस्कृतिविश्वविद्यालयः, गायत्रीकुञ्जशान्तिकुञ्जः, हरिद्वार
(पूर्वाचार्यः) संस्कृतविभागः, कलासंकायः
काशीहिन्दूविश्वविद्यालयः, वाराणसी

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

# भूमिका

**त्रयोदश पटल**—इस पटल में काम्यार्चन की चर्चा की गयी है। काम्यार्चन नित्य और नैमित्तिक से भिन्न होता है। इसमें काल और द्रव्य का ध्यान रखना पड़ता है। ऋतु मास पक्ष नक्षत्र एवं तिथि का विचार करने पर ही तत्तत् अभीष्ट फलों की सिद्धि होती है। विशेष लक्ष्य की पूर्ति के लिये विशिष्ट तिथि आदि अनुकूल मानी गयी है। इसी प्रकार तत्तत् उद्देश्य को प्राप्त करने के लिये पुष्प द्रव्य और बलि भी भिन्न-भिन्न प्रयोग में लाये जाते हैं। भाण्डिकेर मतानुयायी काम्यार्चन के मुहूर्त्त में नैमित्तिक अर्चन भी करते हैं। भौतिक और स्मार्त्तों के लिये विधान अलग-अलग हैं। तत्तत् फल-लाभ के लिये धूप दीप और नैवेद्य भी विशिष्ट होते हैं। जैसे सात्त्विक लक्ष्य के लिये गुग्गुलु, राजस कर्म के लिये चीड़ की गोंद और तामस कर्म के लिये सरसो इलायची आदि। जहाँ तक पात्रों की रचना का प्रश्न है यह नैमित्तिक के अनुसार की जाती है।

संकल्प और ग्यारह न्यासों का नाम बतलाने के बाद प्रदेय बलि के सन्दर्भ में कहा गया है कि बलि दो की संख्या में देनी चाहिये। काम्य पूजा में तिथि का साङ्कर्य दोषाधायक नहीं होता। आगे चलकर नित्य काम्य एवं नैमित्तिक पूजा की परिभाषा बतलाकर शारदीय पूजा के तीन प्रकार तथा शारदी एवं वासन्ती पूजाओं की एकवाक्यता बतलाने के बाद शारदीय पूजा के उद्भव की कथा का वर्णन है। इसके अनुसार रम्भकल्प में रम्भासुर से उत्पन्न महिषासुर का देवी ने अष्टादश भुजारूप धारणकर वध किया। पुनः वह जब नीललोहित कल्प में उत्पन्न हुआ तो देवी ने षोडश भुजा होकर उसका वध किया। दो जन्मों की घटना और अपनी स्त्रीवध्यता का स्मरण कर उसने देवी से प्रार्थना की। देवी ने अपने उग्रस्वरूप का प्रदर्शन कर पुनः सौम्यस्वरूप को दिखलाया। उसके बाद महिषासुर ने तीन वर माँगे। इसके अनन्तर महिषासुर के ऊपर देवी की कृपा और कात्यायन के शाप का वर्णन विस्तार के साथ किया गया है। इसी के अन्दर कात्यायन ने अनेक उद्धरण देकर ऋषि की महिमा का भी वर्णन किया है। इसके अनन्तर महिषासुर की देवीविषयक जिज्ञासा को भी शान्त किया गया है। जब महिषासुर ने देवी का दर्शन कराने के लिये हठ किया तो ऋषि कात्यायन ने देवी की स्तुति की और वह बिल्ववृक्ष के नीचे प्रकट हो गयी। यह कथा रम्भासुर के महामन्त्री युगन्धर ने महिषासुर को सुनायी। तत्पश्चात् युगन्धर एवं महिषासुर के मध्य घटित संवाद का विशद वर्णन है। इसी क्रम में रम्भासुर-सनत्कुमार का संवाद भी वर्णित है। इसमें

सनत्कुमार ने महिषासुर के पराक्रम का वर्णन किया है। महिष पराक्रम को सुनकर रम्भासुर ने महिषासुर के मृत्युविषयक प्रश्न पूछे तो सनत्कुमार ने उत्तर देते हुए बतलाया कि कात्यायन के शापवश स्त्री द्वारा इसकी मृत्यु होगी। सनत्कुमार ने देवी की महिमा का भी वर्णन किया। साथ ही देवी के द्वारा महिषासुर को दिये गये तीनो वरों का भी उल्लेख किया गया है।

मूर्त्ति के भेद से शारदीय पूजा तीन प्रकार की बतलायी गयी है। अष्टादश भुजा के उपासक आश्विन कृष्ण नवमी से तलवार में उग्रचण्डा देवी का उद्‌बोधन करते हैं। मध्यपूजक आश्विन शुक्ल प्रतिपद को षोडशभुजा भद्रकाली का उद्‌बोधन कर पूजन करते हैं। तीसरे वे उपासक हैं जो आश्विन शुक्ल षष्ठी में बिल्वशाखा में दशभुजा दुर्गा का उद्‌बोधन करते हैं। इस पूजा में होम जप कुमारीपूजन साधकों को भोजन उपवास आदि किया जाता है। चतुर्थी तिथि में शक्ति की पूजा का विशिष्टविधान बतलाते हुए पद्धति-भेद से शारदीय पूजा के दो प्रकार बतलाये गये हैं— पौराणिक और तान्त्रिक। पौराणिक पूजा के तीन प्रकार हैं—उत्तम, मध्यम और अधम। इसके पश्चात् पूजा के स्थानों की चर्चा की गयी है। अष्टमी नवमी को करणीय विशेष विधि का वर्णन कर देवी के लिये स्त्री-उपयोगी वस्तुओं की चर्चा की गयी है। राजाओं के द्वारा क्रियमाण दशमी तिथि के क्रिया-कलापों का वर्णन कर शारदीय पूजा-अनुष्ठान के फल का विस्तार के साथ वर्णन किया गया है।

उपचारों के वर्णन क्रम में षोडश, दश और पञ्च उपचारों का वर्णन है। षोडशोपचार—१. आसन २. पाद्य ३. अर्घ्य ४. आचमन ५. मधुपर्क ६. स्नानीय जल ७. वस्त्र भूषण चन्दन ८. गन्ध ९. पुष्प १०. धूप ११. दीप १२. नेत्राञ्जन १३. नैवेद्य १४. आचमन १५. प्रदक्षिणा और १६. नमस्कार। शारदी पूजा के तान्त्रिक वर्णन के क्रम में बिल्वामन्त्रण, चण्डिकाधिवासन, सङ्कल्प, भूतशुद्धि, न्यास, प्राणायाम, अर्घ्यस्थापन, गणेश आदि का पूजन, देवी के लिये माङ्गलिक वस्तु का समर्पण, फल सहित बिल्वशाखाच्छेदनविधि, पत्रिकापूजन, देवी का महास्नान, नवपत्रिका स्नान एवं देवी का विविध स्नान उल्लिखित है। इसके अनन्तर देवी के लिये विधास्यमान अभिषेक का बहुत सुन्दर वर्णन अठारह अनुष्टुप् पद्यों द्वारा किया गया है। आगे कहा गया कि यह महाभिषेक है। महास्नान के अनुष्ठान से उपासक सात जन्मों के पाप से मुक्त होकर अठारह हजार दिव्यवर्षों तक देवीलोक में निवास करता है। इसके पश्चात् भूतबलि, भूतापसारण, पाद्य आदि के द्वारा देवी की पूजा, कलशस्थापन, भूतशुद्धि पत्रिकान्यास का वर्णन कर देवी के ध्यान को बतला कर ध्यानोत्तरकृत्य का

उल्लेख किया गया है। पत्रिका में देवी का आवाहन कर उसकी प्राणप्रतिष्ठा बतलायी गयी है। इस अवसर पर कौलमार्गी साधक पात्र की स्थापना करते हैं। देवी के सन्तोषप्रद उपचारों का वर्णन विस्तार के साथ किया गया है। नवपत्रिकापूजा के फल को बतला कर उनकी अधिष्ठात्री देवियों तथा उन देवियों के मन्त्रों का भी वर्णन विहित है। तत्पश्चात् उनका पृथक्-पृथक् पूजन करने का विधान वर्णित है। अष्टमीकृत्य का वर्णन के क्रम में अष्टशक्तिपूजन, चतु:षष्ठियोगिनीपूजन का वर्णन करने के बाद नवदुर्गा की पूजा-विधि बतलायी गयी है। इसके बाद एकादश देवीपूजा, अस्त्रपूजा, देवी के आभूषण की पूजा, उसके सिंहासन की पूजा को बतलाने के बाद महिषासुर की पूजा के साथ-साथ क्षेत्रपाल, नवभैरव, दशदिक्पाल की पूजाविधि तथा बलिदान के अनन्तर पीठ एवं मूर्त्ति की पूजा को बतलाया गया है। दुर्गासप्तशती की विधि को बतलाते हुए कहा गया कि रात्रि में इसका पाठ और होम नहीं करना चाहिये। अवश्यकर्त्तव्य कुमारी पूजा के सन्दर्भ में कहा गया कि सात से नव वर्ष की कुमारी उत्तम कुलोत्पन्न सुन्दरी गौराङ्गी पितृमातृयुक्त, मन से भी पुरुषसङ्गम की कल्पना न करनेवाली तथा सर्वाङ्गसम्पन्न होनी चाहिये। इसी प्रकार वर्ज्य कुमारियों का लक्षण बतलाकर उनकी संख्या तथा उनकी पूजा के समय की भी चर्चा की गयी है। पूजा का समन्त्रक विधान बतलाकर यह कहा गया कि कुमारी के शरीर में देवी भाव रखकर समस्त कर्म करना चाहिये।

इसके बाद यन्त्र बनाकर मुख्य कुमारी के हाथ में रखकर न्यास करने का विधान है। कुमारी-ध्यान, उसे देय वस्तुओं का वर्णन करने के अनन्तर उसके शरीर में पचास शक्तियों की पूजा बतलायी गयी है। फिर अष्ट देवी की पूजा तथा विविध अन्न का समन्त्रक उत्सर्ग बतलाने के बाद शेष कुमारियों की पूजा एवं उनके भोजनकाल में इतिकर्त्तव्यता की चर्चा प्रस्तुत है। उस समय स्तुति भी किये जाने का विधान है। भोजनकाल में कुमारियों के द्वारा विहित चेष्टाओं से पूजक के शुभाशुभ का अनुमान लगाने की विस्तृत चर्चा कर पीठ और मूर्त्ति की अर्धरात्रिकालीन पूजा का वर्णन किया गया है।

शिवाबलि की चर्चा करते हुए कहा गया है कि कुछ लोग इसका अनुष्ठान करते हैं। विशिष्ट मन्त्र का तीन बार उच्चारण कर शिवाओं का आवाहन तथा बलित्याग करना चाहिये। शिवाबलि का अनुष्ठान करने वाले को सारी सिद्धियाँ मिलती हैं। आगे चलकर शिवास्तुति का वर्णन कर शिवा-उच्छिष्ट अन्न को भूमि के अन्दर गाड़ देने का विधान है। तत्पश्चात् चामुण्डा पूजा करनी चाहिये। उसके ध्यान का वर्णन कर सामर्थ्य होने पर पचास की संख्या में उसके लिये बलि देने

का विधान है। दण्डप्रणाम स्तुति के बाद देवी का विसर्जन करने के बाद मिट्टी की मूर्त्ति एवं पत्रिकाओं का जल में विसर्जन करना चाहिये। उस दिन अश्लील शब्दों का उच्चारण, जलविहार, अश्लील क्रिया-कलाप, यथाशक्ति दक्षिणादान आदि को करना चाहिये। यह कृत्य पूर्वाह्न में होता है। इसके अनन्तर अपराह्न में नीराजन विधि करनी चाहिये। खञ्जन सारस आदि पक्षियों का दर्शन उसका फल बतलाने के बाद विविध कर्त्तव्यों का वर्णन किया गया है। यह समस्त अनुष्ठान राजाओं को करना चाहिये, साधारण मनुष्य के वश की बात नहीं है।

**चतुर्दशपटल**—प्रस्तुत पटल में दमनारोपण और पवित्रारोहण विधियों का विस्तृत वर्णन किया गया है। पार्वती के प्रश्न करने पर भगवान् शिव ने कहा कि हे पार्वति ! यदि तुम्हारे मन में काम के पुनरुज्जीवन की उत्कट लालसा है तो मैं उसे जीवित कर रहा हूँ। तत्पश्चात् उन्होंने गणों को आदेश देकर पुष्पों को मँगाया तथा यथोचित पुष्पों से काम का सम्पूर्ण शरीर बनाया। साथ ही काम को वर प्रदान किया कि तुम पुष्पधनुष तथा पञ्चशर के द्वारा युवतियों को मुग्ध कर पूरे विश्व में विचरण करोगे। मैंने चैत्र शुक्ल त्रयोदशी को तुम्हें शरीरदान दिया है अत: यह तिथि अनङ्गतिथि के नाम से प्रसिद्ध होगी। इस तिथि में तुम्हारी पूजा करने के बाद दूसरे दिन मेरी पूजा होगी। इसके अनन्तर भगवान् शिव ने उमा को पार्वतीपूजा की विधि तथा माहात्म्य बतलाया।

दमनारोपण के काल का निर्णय बतलाने के पश्चात् उसके आरोपण प्रयोग की चर्चा की गयी है। इसके अनन्तर काली के षोडशोपचार पूजन का उल्लेख है। दमनाधिवास की विधि बतला कर पूजासामग्री का सङ्कलन तथा शुभाशंसन बतलाया गया है। अष्टपताकारोपण को बतला कर धूपादि दान के मन्त्रों का उल्लेख है। उसके बाद दिक्पालबलि की चर्चा कर कन्दर्प स्तुति का वर्णन किया गया है। भूमिशोधन, मण्डलनिर्माण, यन्त्रनिर्माण-विधि को बतलाने के बाद मृत्पूर्णमृत्तिकापात्रस्थापन को बतलाया गया है। पङ्कनिर्माण, पङ्कपूजा, अष्टनाग-पूजा, पङ्कबलिदान के अनन्तर दमनपूजा का वर्णन किया गया है। इसमें दमना-नुष्ठान के समस्त अङ्गकार्यों का उल्लेख है। कामदेव रति प्रीति के ध्यान का वर्णन करने के बाद समन्त्रक षोडशोपचार के अर्पण को बतलाया गया है। इसके पश्चात् काम के आवरणाङ्गों की पूजा को बतला कर पुष्प के साथ अङ्गों की चर्चा एवं नमस्कार कहा गया है। काम के इक्यावन नामों की चर्चा कर उनके पूजा-मन्त्रों का उल्लेख किया गया है। कामपरिवार की पूजा के बाद रति एवं प्रीति के बलिदान का मन्त्र, कामपरिवार के बलिदान का मन्त्र वर्णित है। इसके बाद कामदेव की स्तुति कही गयी है।

कालिका की पूजा के लिये काम से आज्ञा लेने की चर्चा कर दमनारोपण उसके अनन्तर शक्तिपूजा करने का विधान है। कामदेव का उत्थापन, पूजन, अशोकारोपण, पञ्चबाणपूजा, पीठ के ऊपर दमन स्थापन का विस्तृत विवरण प्रस्तुत कर दमनारोपण का फल बतलाया गया है। पार्वती की प्रार्थना पर महाकाल ने पवित्रारोहण कर्म को बतलाने के क्रम में सूत्रमाहात्म्य, उपवीत का लक्षण, पवित्रारोहणपरिचय, पवित्रनिर्माणविधि, देवताओं के लिये उपवीतनिर्माण बतलाया गया है। मूलपात्रों का पवित्र बतलाने के बाद गुह्यकाली के द्वीपी आदि नवमुखों के पवित्र का विवरण प्रस्तुत कर उग्रचण्डा आदि अठारह देवियों के पवित्र का वर्णन है। इसके अनन्तर सृष्टि आदि पाँच मुख्य कालियों का पवित्र बतलाया गया है। इसके पश्चात् मुख्यकाली का पवित्र एवं उनकी पूजाविधि का उल्लेख है।

उपर्युक्त विवरण के पश्चात् न्यासों की चर्चा है। ये न्यास हैं—१. निर्वाण २. सामरस्य ३. विश्वरूप और ४. नाडीचक्रन्यास। इनके सामान्य और विशेष दोनों प्रकार के उद्धारों की विस्तृत चर्चा की गयी है। अन्त में नाडीचक्रन्यास का माहात्म्य बतलाते हुए कहा गया है कि इसके अतिरिक्त जितने न्यास हैं सब ऐहलौकिक फल देनेवाले हैं। केवल यही एक न्यास है जो विदेह कैवल्य देता है। इस न्यास के करनेवाले ऋषियों मुनियों आदि का नाम लेकर उनको प्राप्त फलों का उल्लेख किया गया है। इसीलिये पवित्रारोहण कर्म में इसकी अवश्यकर्त्तव्यता का निर्देश है। जहाँ तक पात्रों की स्थापना का प्रश्न है छह आठ दश अठारह चौबीस अथवा छत्तीस तक पात्रों की स्थापना की जा सकती है। इसके अनन्तर पवित्रारोपण मन्त्रों का उल्लेख किया गया है। पवित्रार्पण काल को बतलाने के बाद गणपति आदि देवताओं के पवित्रार्पण की चर्चा की गयी है। इन देवताओं की संख्या ग्यारह है। इसके अतिरिक्त शिवासन, अष्टदल कमल, पात्रसमूह, कुलपात्र के समर्पण मन्त्रों को भी बतलाया गया है। आगे चलकर गुह्यकाली के नवमुखों के लिये अर्पणीय सूत्रों के भी मन्त्रों की चर्चा है। काली के मुख के अनुरूप नवपात्रों की कल्पना को बतलाया गया। इसके आगे कुम्भ और सुरा, अष्टकोणस्थ देवता, महालक्ष्मी, गुरु, द्वारपाल, वटुकभैरव, क्षेत्रपाल, चारो युग, चारो वेद, दशदिक्पाल, पञ्चप्रेत, भैरवपीठ, षोडशयज्ञघटित आसन के सूत्रार्पण मन्त्रों का वर्णन किया गया है।

कुब्जिका, उग्रतारा, छिन्नमस्ता, चामुण्डा, शिवदूती, कालसङ्कर्षिणी, चण्डेश्वरी, नवमातृका, नवग्रह, सृष्टि आदि पञ्चकाली, सृष्टिकाली की परिवारभूत चौबीस आवरणदेवताओं, स्थितिकाली की परिवारभूत चौबीस देवताओं, संहार-

काली, अनाख्या एवं भासाकालियों की पृथक्-पृथक् चौबीस-चौबीस परिवार-देवताओं के सूत्रार्पण मन्त्रों का उल्लेख कर मुख्य देवता गुह्यकाली के पवित्रार्पण मन्त्र का वर्णन है। इस प्रकार हम देखते हैं कि पवित्र का इस अनुष्ठान में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण स्थान है। समस्त देवताओं को पृथक्-पृथक् पवित्र आदि अर्पण के पश्चात् बलि दीप आदि के समन्त्रक अर्पण का विधान वर्णित है। यहाँ इतना वैशिष्ट्य है कि यह बलि दो-दो की संख्या में दी जाती है। इसके अनन्तर समस्त तैंतीस करोड़ देवताओं को एकतन्त्रेण समस्त वस्तु समर्पण करने का निर्देश है। इसके बाद शक्तिपूजा, कुमारीपूजा, तीन बार पुष्पाञ्जलि, शिवाबलि, पात्रतर्पण की चर्चा कर देवीस्तव को कहा गया है। संक्षिप्त कवचपाठ के बाद शान्तिपाठ को विस्तारपूर्वक चौंसठ श्लोकों में उल्लिखित किया गया है। देवी का विसर्जन वर्णित कर यह कहा गया कि यह अनुष्ठान प्रतिवर्ष किया जाना चाहिये। ऐसा करनेवाले साधक के ऊपर कालिका प्रसन्न होकर यथेप्सित वर प्रदान करती है।

*

# विषयानुक्रमणिका

| विषयाः | पृष्ठाङ्काः |
| --- | --- |